पंचम अध्याय

माला वर्मा और प्रीती सेनगुप्ता के यात्रा साहित्य का यात्रा के तत्वों के आधार पर तुलनात्मक अध्ययन

5.1 प्रत्यक्ष अनुभव

5.2 व्यापक जीवन

5.3 कलात्मक

5.4 पात्र एवं चरित्रांकन

5.5 परिवेशांकन

5.6 इतिहास बोध

5.7 उद्देश्य

5.8 रोचकता

5.9 भारतीयता के तत्त्व

5. माला वर्मा और प्रीती सेनगुप्ता के यात्रा साहित्य का यात्रा के तत्वों के आधार पर तुलनात्मक अध्ययन

हिंदी और गुजराती यात्रा साहित्य में माला वर्मा और प्रीति सेनगुप्ता दो महत्वपूर्ण स्त्री-यात्री लेखिकाएँ हैं, जिन्होंने देश दुनिया के विभिन्न स्थलों का सूक्ष्म विवरण प्रस्तुत किया। आलोच्य लेखिकाओं ने अपनी यात्राओं के माध्यम से सामाजिक, सांस्कृतिक और आत्मिक पहलुओं को भी उद्घाटित किया है। दोनों लेखिकाओं की यात्राओं में कुछ समानताएँ होते हुए भी, उनके दृष्टिकोण और अभिव्यक्ति की शैली में भिन्नताएँ हैं, जो यात्रा तत्व को रोचक बनाता है।

माला वर्मा एवं प्रीति सेनगुप्ता के यात्राओं में अनेक भिन्नता है। ये भिन्नता के कई कारण है। माला वर्मा की 'यात्राएं' किसी एक 'ट्रैवल एजेंसी' द्वारा तय मापदंड के आधार पर होती है। जिसमें कई लोग एक साथ जुडते है। यानि इनकी यात्राएं एक प्रकार से समूह की यात्राएं होती है। इस कारण इनकी यात्राओं की समय सारणी लगभग पहले से तय होती है। माला जी की यात्राओं में यात्रा कंपनी द्वारा समूह के सदस्यों की सुविधाओं का ध्यान रखा जाता है। इनकी यात्राओं में स्थलों की सैर अधिक है। जन सामान्य से मिलना या अकेले कहीं निकल पड़ना, भटकते हुए कुछ देख-ताक कर आ जाना कम होता है। या किसी जगह पर रुकने का मन हुआ तो भी नहीं रुक सकते है, कारण समूह यात्रा है। एक प्रकार से भ्रमण करते हुए भी इनकी यात्राएं अनुशासन में बधी अनुशासन की यात्राएं है, जिनमें मन की बेफिकरी का प्रायः अभाव है। इसके विपरीत प्रीति सेनगुप्ता की यात्राएं अकेले की गयी यात्राएं है। अपने मन की यात्राएं है। प्रीति जी की यात्राओं में स्थलों की अपेक्षा जन सामान्य से मिलना, उन्हे देखना-समझना, उनके बीच जाना, उनके जीवन को समझना अधिक है। प्रीति सेनगुप्ता की यात्राएं एक प्रकार से जन-जीवन की यात्राएं है। यही कारण है कि, इनकी यात्राओं में सामान्य जन-जीवन की उपस्थिति अधिक है। खट्टे-मीठे अनुभव अधिक है। लोगों को व समाज को इन्होंने ज्यादे करीब से देखा तथा महसूस किया है। इसलिए इनकी यात्राओं में स्थानीय लोगों की मौजूदगी के साथ प्रादेशिक लोक रीति-नीति के साथ वहाँ की सुख-सुविधाओं का विवरण अधिक है। इस तरह आलोच्य लेखिकाओं के यात्रा साहित्य में तत्वों के आधार पर भिन्न-भिन्न अनुभव है। जो इस प्रकार है-

5.1 प्रत्यक्ष अनुभव :

यात्रा साहित्य में प्रत्यक्ष अनुभव का विशेष महत्व है। जब कोई लेखक यात्रा करता है, तो उसका उद्देश्य केवल स्थल-वर्णन करना नहीं होता है, परंतु उस स्थान की आत्मा को महसूस करना होता है। लेखक अपनी दृष्टि से उन बारीक पहलुओं को पहचानता है, जिन्हें एक सामान्य पर्यटक शायद न देख पाए। जैसे– पर्वतीय क्षेत्र में हवा की ठंडक, घाटियों की गूंज, जंगलों की नमी, स्थानीय व्यंजनों का स्वाद, वहाँ की बोली में छिपे भाव। ये सभी अनुभव तभी संभव होते हैं, जब लेखक स्वयं वहाँ जाकर अपनी इंद्रियों से उन्हें महसूस करे। प्रत्यक्ष अनुभव के बिना यात्रा साहित्य केवल सूचनात्मक रह जाता है, उसमें भावनात्मक गहराई और कलात्मक स्पर्श नहीं आ पाता। प्रत्यक्ष अनुभवों से युक्त लेखन, पाठक को उस स्थान की जानकारी देता है, तथा उन्हें यात्रा का सहभागी भी बना देता है। लेखक अपनी अनुभूतियों में स्थानीय परिवेश, चित्रात्मक भाषा, संवाद और आत्म-चिंतन को मिलाकर यात्रावृत्तांत को एक जीवंत कथा का रूप दे देता है। यात्रा साहित्य में प्रत्यक्ष अनुभव वह आधार है, जिस पर संपूर्ण रचना की विश्वसनीयता और प्रभाव टिकी होती है। इससे लेखक का दृष्टिकोण व्यापक होता है, और पाठक को भी एक समृद्ध, वास्तविक अनुभव प्राप्त होता है। आलोच्य लेखिकाओं के यात्रा अनुभव में भिन्नता है। उसका विवेचन यहां प्रस्तुत है-

माला वर्मा का मानना है की, शरीर स्वस्थ रहते व्यक्ति को मन भर कर यात्राएं कर लेनी चाहिए। उनके अनुसार "हाथ, पाँव, आँख, कान, दिल-दिमाग चुस्त-दुरुस्त रहते अगर आपने भ्रमण न किया, तो समझिए चूक गए। अतः दूर-दराज पर्यटन का कार्यक्रम समय रहते ही बनाने में जीवन की सार्थकता है।"[1] किसी भी व्यक्ति के भीतर की चेतना का विकास करने के लिए यात्रा अत्यंत आवश्यक है। यात्राओं के माध्यम से व्यक्ति नई संस्कृति तथा जीवनशैली का परिचय प्राप्त करता है। यह अनुभव मनुष्य की सोच को विस्तार देता है, उसकी दृष्टि को व्यापक बनाता है और उसे एक नया दृष्टिकोण प्रदान करता है। लेखिका यहां उन सभी लोगों से यात्रा करने का आह्वान करती है जो स्वस्थ है। माला जी का मानना है की, जब तक जीवन में ऊर्जा है, तब तक दूर-दराज के स्थानों की यात्रा कर लेनी चाहिए, क्योंकि यही यात्राएँ जीवन को अर्थ देती है, उसे स्मरणीय बनाती है।

माला वर्मा अपनी यात्राओं के दौरान दूसरे देशों की स्थिति-परिस्थिति, वहाँ की रहन-सहन पद्धति, देखकर प्रभावित होती है और अक्सर अपने देश को याद करने लगती है। अपने देश की अव्यवस्थाओं के लिए कई बार वे जी भर कर 'भारत' को कोसती भी है। यूरोप यात्रा के दौरान का उनका अनुभव कुछ इस प्रकार से है- "यूरोप के सुव्यवस्थित जन-जीवन तथा आधुनिकता की चकाचौंध में अपने भारत की स्थिति स्पष्ट

दिखती है। दुःख है, और अपने देश की समूची व्यवस्था पर लज्जा का अनुभव होता है।"[2] यह प्रसंग एक गहरी आत्मचिंतन की पुकार है, हम कब तक अपनी सांस्कृतिक महानता की दुहाई देकर वर्तमान की अव्यवस्था को नज़रअंदाज़ करते रहेंगे। भारतीय समाज को अपने भीतर झाँकना होगा, व्यक्तिगत से लेकर सामाजिक स्तर तक सुधार के प्रयास करने होंगे। तब जाकर यूरोप जैसी व्यवस्था भारत में संभव हो पाएगी। 'नासिरा शर्मा' जापान यात्रा के दौरान भारत की तुलना जापान से करते हुए दुख व्यक्त करती है और लिखती है- "अभी जापान में उनकी उपलब्धियों को देख अचम्भित थी कि अहसास जागा कि आख़िर हम कहाँ पर पिछड़ गए। स्वतन्त्रता संग्राम के बाद हमने विकास की कई मंज़िलें तय कीं मगर वह चुनौती हम विश्व स्तर पर न दे सके जो जापान जैसे छोटे देश ने अमेरिका को बाज़ार से ख़ारिज कर के एक अपवाद क़ायम किया। उनका अनुशासन, उनकी तकनीकी दक्षता, उनका सौन्दर्यबोध, उनका बलिदान, उनके राष्ट्रप्रेम में कितनी सहजता एवं एकता है।"[3]

आधुनिकता की चकाचौंध से प्रभावित होकर केवल बड़ी-बड़ी बातों से काम नहीं चलेगा। परंतु उसकी जड़ों में जाकर नागरिक कर्तव्य और समर्पण के भाव को आत्मसात करना होगा। यही भाव माला जी यहां व्यक्त करती है।

जापान यात्रा के दौरान माला वर्मा प्रत्यक्ष रूप से जापान सरकार के कार्य तथा नागरिकों को लिए दी गई सुविधावों देखकर प्रभावित होती है। माला वर्मा के अनुसार "सड़क पर गाड़ी तेजी से आगे बढ़ रही थी। कई-कई लेनों वाली सड़कें और जब-तब फ्लाई ओवर का जाल, गाड़ियों को रुकने, अटकने का मौका ही नहीं मिलता। बाधा तो है नहीं, बल्कि आपकी गाड़ी सुचारू रूप से जितनी तेजी से अपने गंतव्य स्थल पर पहुँच सके उसके लिए जापान सरकार कटिबद्ध है। रोड साइड के दोनों तरफ़ जहाँ थोड़ी-बहुत आबादी दिखती वहीं फाइबर ग्लास की दीवारें खड़ी हो जाती। अद्भुत है ऐसी व्यवस्था। ध्वनि-प्रदूषण से लेकर हर तरह के प्रदूषण से यहाँ के लोग बच जाते हैं।''[4] लेखिका समग्र दृश्य को देखने के बाद अपने देश भारत के बारे मे सोचती है और कहती है "इतना कुछ देख किसके मन में ये भावना नहीं पनपेगी कि काश! हमारे भारत में भी सब कुछ यथा स्थान, हर तरफ़ स्वच्छता, सुन्दरता होती। हमारे देश के लोग भी सरकार द्वारा बनाए क़ानून के तहत जीवन-यापन करते। सब कुछ संभव है गर हम अपने भारत से, इसकी मिट्टी से प्यार करें। सच्चा आदर मान दें, खोखली नारेबाजी नहीं, हम अपनी नदियों को स्वच्छ रखें, अपनी धरती की इंच-इंच जगह की स्वच्छता पर ध्यान दें। खुद ईमानदार बनें। ऐसा कुछ काम न करें जिससे दूसरों को

तकलीफ़ हो, तो क्या कारण है कि हमारा भारत सुन्दर न बने, एक आदर्श देश न कहलाए। फिर बेवजह देश-विदेश से तुलना क्यों उठे।"[5]

जापान के लोगों मे देश प्रेम की भावना को लेखिका ने यहां चित्रित किया है, लेखिका को भारत के लोगों की चिंता होती है, वह चाहती है की, भारत मे भी ऐसी व्यवस्था स्थापित हो लकिन बदले मे भारत के लोगों को भी अपने देश से यहां के संसाधनों से प्रेम करने की चेस्टा दिखानी होगी, तब जाकर जापान जैसा प्रदूषण मुक्त वातावरण मे जीना संभव हो पाएगा। प्रस्तुत प्रसंग के द्वारा माला जी इंगित करती है की, अगर एक देश अपने नागरिकों की अनुशासनप्रियता, ईमानदारी, स्वच्छता के प्रति सजगता और राष्ट्र के प्रति प्रेम के मूल्यों को अपनाए, तो वह देश स्वतः ही एक आदर्श राष्ट्र बन सकता है। जापान के उदाहरण से माला वर्मा भारतीय समाज को आत्मदर्शी दृष्टिकोण अपनाने के लिए प्रेरित करती है। लेखिका खोखले नारों से परे जाकर वास्तविक कर्म करने की बात करती हैं। जैसे- नदियों को स्वच्छ रखना, धरती की हर इंच की सफाई की जिम्मेदारी लेना, दूसरों को तकलीफ न देने का संकल्प लेना। उनका मानना है की, भारत को सुंदर और आदर्श बनाने के लिए किसी बाहरी शक्ति की आवश्यकता नहीं है। यदि प्रत्येक नागरिक अपने दायित्वों को ईमानदारी से निभाए, तो देश स्वच्छ, सुंदर और उन्नत बन सकता है। लेखिका की यह भावना स्वदेश-प्रेम से प्रेरित है, जिसमें आलोचना नहीं, अपितु सुधार की प्रेरणा निहित है। अंततः जापान के प्रसंग को लेखिका एक दर्पण की तरह प्रस्तुत करती हैं, जिसमें भारत संभावनाओं को देखा जा सकता हैं। माला जी बताना चाहती हैं कि यदि नागरिक बदलें, तो राष्ट्र भी बदलेगा। इसलिए उन्होंने नारा न देते हुए, कर्म की आवश्यकता पर बल दिया है।

यात्राओं में किसी स्थल की यात्रा के साथ-साथ उस जगह के इतिहास की भी यात्रा होती है। धर्म व दर्शन की यात्रा होती है। विचारों की यात्रा होती है। माला वर्मा जापान प्रवास के दौरान कहती है कि, "यही ज़िन्दगी है। चरैवेति-चरैवेति। आज जापान की धरती से विलग हो रहे हैं तो कल फिर नई धरती नए देश का रुख करेंगे। ये दुनिया क्या है मुसाफिरखाना। आज यहाँ तो कल वहाँ और जब ऊपर वाले ने फ़ोन की घंटी बजाई सब छोड़-छाड़ कर वहाँ की तैयारी करनी होगी जहाँ कोई लगेज लेकर नहीं जाता, न कोई वापस लौटकर आता है।"[6] माला वर्मा इस भावपूर्ण प्रसंग के माध्यम से जीवन की अस्थायिता, और अंतिम सत्य की ओर संकेत करती हैं। 'चरैवेति-चरैवेति' अर्थात् निरंतर चलते रहने का आह्वान लेखिका करती है, यह जीवन का मूल मंत्र है। लेखिका जापान छोड़ने की स्थिति को मात्र एक भौगोलिक बदलाव के रूप में नहीं देखतीं, परंतु उसे जीवन की अनवरत गति और परिवर्तनशील स्वभाव से जोड़ती हैं। माला

जी कहती है, जीवन एक मुसाफ़िरखाना है, जहाँ ठहराव नहीं है। आज एक देश, कल दूसरा देश यह जीवन की राह है। हर अनुभव, हर यात्रा एक पड़ाव है, लेकिन अंतिम पड़ाव वह है, जब मृत्यु की पुकार होती है। उस समय न कोई सामान साथ जाता है, न कोई लौट कर आता है। माला जी यहां यथार्थ जीवन की नश्वरता और भौतिक चीजों के क्षणभंगुर होने का संकेत करती है। लेखिका की भाषा में एक दार्शनिक दृष्टिकोण है, जो पाठक को यह सोचने पर मजबूर करता है कि जीवन में जो कुछ भी स्थान, संबंध, वस्तुएँ है, वह अस्थायी है। इसलिए जीवन को सार्थक बनाने का एकमात्र उपाय है, सतत कर्म, और मानसिक तैयारी, उस अंतिम यात्रा के लिए जहाँ केवल कर्मों का बोझ साथ चलता है। इस प्रकार, लेखिका जीवन की गतिशीलता को स्वीकारने की प्रेरणा देती हैं, और मानती है की, प्रत्येक परिवर्तन एक स्वाभाविक प्रक्रिया है, जिसे स्वीकार कर आगे बढ़ना ही जीवन का सत्य है। माला वर्मा यात्रा के दौरान रास्ते में आने वाले सभी स्थलों को ध्यान से देख लेना चाहती है तभी कहती है- "बस की खिड़कियों से हम कितना देखें कितना याद रखें। सब कुछ तेजी से पीछे छूटता जा रहा था और हम आँखें फाड़े सब कुछ अपने में समाहित करते रहे।"[7] प्रस्तुत प्रसंग केवल एक यात्रा का वर्णन भर नहीं है, परंतु यह जीवन की यात्रा का गहरा प्रतीक है। जिस तरह बस से बाहर के दृश्य पलभर में आँखों से ओझल हो जाते हैं, उसी तरह जीवन में भी क्षण बीतते जाते हैं। कुछ स्मृतियाँ बनती हैं, कुछ धुंधली हो जाती हैं। लेखिका इस अनुभूति को आत्मीयता के साथ प्रस्तुत करती हैं। कैसे हम चाहते हैं, कि हर सुंदर दृश्य, हर प्रिय पल हमारे साथ हमेशा बना रहे, पर समय की तेज़ रफ्तार हमें ऐसा करने नहीं देती। यह प्रसंग दर्शाता है, कि समय कभी किसी के लिए रुकता नहीं है। मनुष्य जीवन एक सतत प्रवाह है, जिसमें सब कुछ क्षणिक है। फिर भी मन उन्हें संजोने की चेष्टा करता है, ताकि वे हमारी स्मृतियों में अमिट बन सकें। यही मनुष्य की भावुकता और जीवन की सुंदरता है।

माला वर्मा 'ब्राजील' के 'रियो' शहर की यात्रा में टूरिस्ट को दिए जाने वाली सुविधा के संदर्भ का वर्णन करती है ओर फिर भारत की स्थिति से तुलना करती है- "यहाँ टूरिस्ट स्पॉट पर टॉयलेट आदि की उत्तम व्यवस्था है जिसका अभाव आपको भारत में पल-पल खटकता रहेगा। हमारे यहाँ तो एयरपोर्ट पर ही टॉयलेट की बिगड़ी स्थिति है फिर पब्लिक प्लेस का तो ऊपर वाला ही मालिक है। जाने कब सुधार होगा या कभी नहीं! पता नहीं हमारे देश पहुंचे विदेशी पर्यटकों के लिए इस बाबत क्या इंतजाम किया जाता है।"[8] माला वर्मा द्वारा यहां दिए गए प्रसंग में आत्ममंथन और सामाजिक जागरूकता की पुकार है। वह संकेत देती हैं कि यदि भारत देश को पर्यटन के दृष्टिकोण से आकर्षक बनाना है, तो विदेशी पर्यटकों के

लिए साफ-सफाई, टॉयलेट और अन्य सार्वजनिक सुविधाओं का स्तर सुधारना अनिवार्य है। क्योंकि एक देश की पहली छवि उसकी सार्वजनिक व्यवस्था से बनती है। जब तक भारत इस बुनियादी पहलू पर गंभीर नहीं होगा, तब तक 'अतिथि देवो भव' जैसे आदर्श केवल नारों तक ही सीमित रह जाएंगे। सुधार की आवश्यकता केवल सरकार में नहीं, नागरिक चेतना में भी झलकनी चाहिए।

इजिप्त जाने से पहले प्रीति सेनगुप्ता ने पहले से सुन रखा था की, वहां अकेली महिला का जाना सुरक्षित नहीं है। लूट-पाट, चोरी का खतरा अधिक रहता है। इन बातों से लेखिका का मनोबल कम नहीं होने वाला था। लेखिका उस स्थान पर जाती है। लेखिका ने वहां के स्थानीय युवा लड़कों के बारे मे जो बाते सुनी थी, उसका जिक्र स्वयं अनपे अनुभव से इस प्रकार करती है- "बधा जाने अेक ज शाडामां भनेला। बधानी वातो सरखी, शब्दों सरखा। बे मिनिटमा तो आँखों, नाक। होंठनो सौन्दर्यना वखाणथी सामेनाने नरम करी दे, अने पछी गंभीर थइने कहे, तमे काई उंधु ना मानतां, पण तमे खरेखर मने गमो छो। आटलु बधु, फक्त बे मिनिटमां ? जोके आखी ओकोक्ति तो थोड़ी लांबी होय।"[9] असामाजिक तत्व दुनिया के प्रत्येक जगह पर विद्यमान है, यहा लेखिका को स्थानीय लड़कों द्वारा जिस तरह के सवाल पूछे गए, ऐसा दुनिया के सभी देशों मे आज-कल देखने को मिल रहा है। जहां एक अंजान स्त्री को देखकर वहां के कुछ लोग उससे मित्रता करने का प्रयास करते है, और उसे परेशान करने या ठगने की कोशिश करते है। लेखिका अपने अनेक वर्षों के यात्रा के अनुभव से लोगों को उनके हाव भाव से जान जाती है, की उनका मकसद क्या है ? इसलिए यहां लेखिका उनकी बातों का जवाब दिए बिना वहां से चली जाती है। अकेले यात्रा करते समय इस तरीके के अनुभव यायावर के मनोबल को कम कर सकते हैं, लेकिन एक यात्री को यह समझना होगा कि, यह सामान्य घटना है। यात्राओं में इस तरीके की घटनाएं होती रहती है। लेकिन ऐसी परिस्थिति में व्यक्ति को संभल कर अपने विवेक से सही-गलत का निर्णय लेना होता है।

प्रीति सेनगुप्ता भारत एवं जापान की युवा पीढ़ी को देखकर चिंता व्यक्त करती है। ये नवयुवा जो अंधाधुंध पश्चिमी सभ्यता का अनुकरण कर रहे है। जिससे लेखिका को चिंता होती है। लेखिका यहां अपनी वेदना प्रकट करती है- "स्वच्छ, सुंदर, सुगम, सुरक्षित, सभ्य, संस्कृत, संयंत्र-अद्भुत अेवो देश ते जपान। आ समन्वयनु समतोलन सर्वदा सचवाई रहे छे तेम नथी। खास करीने नवी पेढ़ी पश्चिमनी नकल करवामां उत्सुक होय छे, अने जपाननी सदिओ जुनी धीर गतिनी संस्कृति माटे अेमनी पासे धीरज होतो नथी। पण आवु तो आपणा देशमां पण क्यां जोवा नथी मडतुं ? अगत्यनु तो अे छे के जपानमा मोटा भागना समाजमा प्रशस्य नियमबद्धता अने निर्भर-योग्यता छे।"[10] प्रीति सेनगुप्ता ने जापान की विशेषताओं के

साथ-साथ उसकी कुछ सामाजिक चुनौतियों की चर्चा भी यहां पर की है। जापान की विशेषताओं में लेखिका ने स्वच्छता, अनुशासन, तथा संस्कृति को उजागर किया है, साथ ही बदलते समय में पश्चिमी प्रभाव और 'सांस्कृतिक संतुलन' की चुनौती पर चिंता जताई है। प्रीति जी केवल जापान की बात नहीं करती, उन्होंने हमारे भारतीय समाज के लिए भी एक आईना प्रस्तुत किया है। वह वैश्वीकरण और पश्चिमी संस्कृति के संक्रमण से प्रभावित है।

'मियाझाकी' (जापान) में अपने एक स्थानीय मित्र के घर रुकने ओर वहां के अनुभव से लेखिका को जापान का समाज बहुत ही सरल, सहज एवं अनुशासित तथा सर्वगुण संपन्न लगता है। इसका वर्णन लेखिका यहां पर करती है- "मियाझाकीना चिरस्मरणीय मुकाममां आ रात तो अपूर्व हती। जपान सिवाय आवी सुखद निखालसता अने साहजिक मित्राचारी बीजे क्या मड़े ? जे समाजमां सुख, शांति, स्वस्थता अने सलामती होय त्यांना ज लोकोमां पण आ बधा गुणों होय ने।"[11] लेखिका के अनुभव से ज्ञात होता है की, जापानी समाज भावनाओं की दृष्टि से अत्यंत समृद्ध है। सेवाभाव का गुण जापानीयों के डी.एन.ए. मे मोजूद है। लेखिका कहती है, वह अनुभव ऐसा था जो जीवनभर स्मरणीय रहेगा। वह रात केवल किसी उत्सव या दृश्य की वजह से विशेष नहीं थी, परंतु वहां के वातावरण में जो 'निखालसता' सरलता, निष्कपटता और मित्रता सब प्राकृतिक था। उसमे किसी भी तरह का बनावट नहीं था। जिससे लेखिका को आत्मीयता का अनुभव होता है। इस प्रकार की वास्तविक और सच्ची मानवीय भावनाएं अन्य किसी देश में इतनी सहजता से देखने को नहीं मिलतीं है। यह अनुभव केवल एक व्यक्ति विशेष की नहीं, परंतु पूरे समाज के चरित्र का प्रतिबिंब है। लेखिका कहती है 'जे समाजमा सुख, शांति, स्वस्थता अने सलामती होय, त्यांना ज लोकोमां पण आ बधा गुणों होय ने।' अर्थात् जिस समाज में समग्र रूप से शांति, सुरक्षा, स्वास्थ्य और संतुलन हो, वहां के नागरिकों के आचरण और व्यवहार में भी वही मूल्य प्रतिबिंबित होते हैं। प्रस्तुत प्रसंग स्पष्ट करता है कि, किसी भी देश की सांस्कृतिक सुंदरता केवल इमारतों या परंपराओं में न होकर, वहां के मानव-व्यवहार से झलकती है। जापानी समाज की सबसे बड़ी विशेषता उसकी अनुशासनप्रियता, स्वच्छता, सहनशीलता, और मूल्यों के प्रति प्रतिबद्धता है। इन गुणों का समावेश सरकारी नीतियों या संस्थानों के अलावा हर सामान्य नागरिक की दिनचर्या, में स्पष्ट दिखता है। जब जापानी लोगों के अनुशासन एवं मानवता के गुणों की बात आती है, तब 'इंदु जैन' का जापान यात्रा प्रसंग यहां जापानी लोगों की मनुष्यता को सिद्ध करने में सहायक प्रतीत होता है। इंदु जी कहती है- "वैसे, मैंने देखा है कि यहां लोग धुत्त होकर भी आमतौर पर दूसरों से नहीं उलझते। शुक्रवार, शनिवार की रातों को

जगह-जगह कै के ढेर मिलेंगे, लोग रेलगाड़ियों में सीटों पर पसरकर सो जाएंगे या अस्थिर पैरों पर खड़े साठ-सत्तर डिग्री के कोण पर झूमते रहेंगे, लाल-लाल आंखें खोलते, बंद करते रहेंगे लेकिन अपनी मंजिल पर लड़खड़ाते कदमों से पहुंच ही जाएंगे। अनेक बार खूब संभ्रांत दिखते सज्जनों की नशे में यह हालत देखी है कि दो मित्र अगल-बगल से उन्हें पकड़कर चला रहे हैं। कभी-कभी, अनुपात में बहुत कम, स्त्रियां भी धुत्त देखी हैं। सुना है कि अगर कोई नशे की झोंक में सड़क पर गिर पड़े या ट्रेन में सोता छूट जाए तो पुलिस उसे बड़े स्नेह से उठाकर ले जाती है और विशेष कमरों में रात भर के लिए बंद कर देती है। उन कमरों की दीवारें और फर्श गद्दानुमा हैं ताकि नशे के अतिरेक में कोई कितना ही सिर पटके, चोट न पाये। वहां उन्हें युकाता पहना दिया जाता है, कसे कपड़ों के बंधन से मुक्त कर दिया जाता है और गंदे या मैले अंदर के वस्त्रों को धोकर साफ-सुथरा कर दिया जाता है। वहां पहुंचने पर उनके घर फोन करते हैं कि अमुक साहब यहां पर हैं ताकि घर में चिंता न हो और कोई आकर उन्हें ले जाए। कहते हैं कि अधिकांश पत्नियों का उत्तर होता है, बहुत-बहुत धन्यवाद, किंतु कृपया मेरे पति को वहीं रखें। सुबह नशा उतरने पर वे स्वयं घर आ जाएंगे।"[12] वैज्ञानिक अनुसंधान से यह प्रमाणित हुआ है कि, जब कोई व्यक्ति अधिक शराब पी लेता है, तब उसका दिमाग काम करना बंद कर देता है और उसका शरीर ऐसी हरकतें करता है, जो उसे संस्कार रूपी मिले होते है। अन्य देशों में देखा गया है, अत्यधिक शराब पिएं हुए व्यक्ति दुष्कर्म करते हैं, लोगों के साथ गलत व्यवहार करते हैं, वही जापान के लोग, उनके स्वभाव में उनके संस्कारों की वजह से ज्यादा शराब पिया हुआ व्यक्ति भी कोई गलत कार्य नहीं करता है। भारत तथा अन्य देशों में शराबियों के साथ क्या व्यवहार किया जाता है, इससे हम सब अवगत है। जबकि इसके विपरीत जापान में एक व्यक्ति शराब की हालत में चल नहीं पा रहा होता है, वहां उस व्यक्ति को स्थानीय लोग बड़े आदर के साथ एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाते हैं तथा पुलिस भी उसे व्यक्ति को आदर के साथ अपने थाने में रखती है। उनके यहां मानव के लिए लोगों के मन में प्रेम है, करुणा है, दया के भाव है। इस पूरी घटना में जापानियों के संस्कारों की झलक देखने को मिलती है। वे इस पृथ्वी के सभी सजीव-निर्जीव तत्वों का आदर व उनका सम्मान करते है। यहां हमारा उद्देश्य शराब या किसी शराबी को प्रोत्साहित करना नहीं है परंतु जापान के लोगों के गुणों को आत्मसात करके सकारात्मक समाज निर्माण किया जा सकता है। यह सिद्ध करना है।

यहीं वजह है कि, जापान जैसे देश में रहकर व्यक्ति को बाहरी एवं आंतरिक व्यवस्था से संतोष मिलता है, तथा यह आत्मिक शांति और अपनत्व का अनुभव भी कराता है। लेखिका के शब्दों में जो आत्मीयता है,

वह अनुभव की उस गहराई को दर्शाती है, जिसमें मानव संबंधों की गरिमा, समाज की परिपक्वता और संस्कृति की स्थिरता झलकती है। 'मियाझाकी' की वह रात प्रीति सेनगुप्ता के लिए केवल एक क्षण नहीं था, लेकिन एक ऐसे समाज के दर्शन का अवसर था, जहाँ जीवन जीने की एक प्रेरणादायक शैली देखने को मिलती है। इस अनुभव से यह भी संकेत मिलता है कि, यदि हमारे समाज में सुख, शांति और स्वस्थता का वातावरण हो, तो मनुष्यता अपने श्रेष्ठतम रूप में सामने आ सकती है। यह अनुभव जापान के सौन्दर्य एवं उसके मूल्यों की जीवंत प्रस्तुति है।

प्रीति सेनगुप्ता को यात्रा के दौरान कई अटपटे अनुभव भी होते हैं, इन्हीं में एक 'सिंगापुर यात्रा' के दौरान एक पुरुष जो अपने आप को सरकारी अधिकारी बताकर लेखिका से खूब सारे सवाल पूछता है। फिर अंत में लेखिका से उनके होटल का पता पूछता है। फिर कहता है, क्या मैं तुम्हें मिलने आ सकता हूं ? तब लेखिका को ज्ञात होता है कि, यह कोई सरकारी अधिकारी नहीं है, बल्कि यह कोई मूर्ख, अनाड़ी, भावुक पुरुष है, जो निजी रुचि के कारण यह सब पूछताछ कर रहा था। इस घटना का वर्णन स्वयं लेखिका इस प्रकार करती है- "सिंगापुरमां अेक अमलदार पण पेला गुंडाओनो बरोबरियो मड़ी आवे छे। अनेक प्रश्नों पुछया पछी अे होटलनु नाम पण पूछे छे। नवाई लागे छतां जवाब तो आपवो ज पड़े। आटली प्रश्नोंत्तरी पछी (मूओ) पूछे छे, सिंगापुरमा तमने मड़ी शकु ? हवे अे अमलदार न हतो, अेक मूर्ख पुरुष हतो। कंईक चिड़ाइने हवे में पुछयुं, आटला माटे मने आटला बधा प्रश्नों पूछया हता ? जवाब आपवाने बदले अे अेटलो ज गंभीर रह्यो जेटलो प्रश्नो पूछती वखते हतो। आ आखो बनाव अतर्कित, असंभव अने उपहासयोग्य हतो। माराथी मनातुं नहोतुं के आवा लोको होई शेक छे।"[13] सिंगापुर की यह घटना सामान्य नहीं थी। एक महिला यात्री के मानसिक और भावनात्मक स्वास्थ्य पर इसका गहरा प्रभाव पड़ता है। जब कोई व्यक्ति अधिकारी की भूमिका में आकर अत्यधिक निजी सवाल पूछता है– जैसे होटल का नाम या यात्रा की जानकारी, तो महिला को लगता है कि, वह किसी आवश्यक सरकारी प्रक्रिया का हिस्सा है। लेकिन जब यह बात सामने आती है कि, यह व्यक्ति वास्तव में कोई अधिकारी नहीं, बल्कि एक साधारण व्यक्ति है, जो सिर्फ मिलने की इच्छा रखता है। तब यह अनुभव मानसिक रूप से बहुत परेशान करने वाला होता है। ऐसी घटनाएँ महिलाओं को असुरक्षा, शंका, और भय की भावना से भर देती हैं। जब कोई अनजान व्यक्ति अधिकार का दिखावा करते हुए व्यक्तिगत जानकारी लेता है, और बाद में उसका उद्देश्य कुछ और निकलता है, तो यह महिला की निजता में घुसपैठ और विश्वास का दुरुपयोग बन जाता है। इससे भविष्य में महिला यात्री हर किसी पर संदेह करने लगती है, चाहे वह वास्तविक अधिकारी हो या

सहयात्री। यह एक मानसिक बोझ बन जाता है, जो यात्रा को आनंददायक बनाने के बजाय तनावपूर्ण बना देता है। महिलाओं को अक्सर यात्रा के दौरान अकेले निर्णय लेने होते हैं। होटल बुकिंग, ट्रांसपोर्ट, लोकेशन आदि। ऐसी घटनाएँ उन्हें आत्मनिर्भर बनने के बजाय भयभीत करती हैं। वह बार-बार सोचने लगती है कि, क्या उसने कोई गलती की ? क्या उसका व्यवहार किसी गलतफहमी का कारण बना ? इससे उनके आत्मविश्वास में कमी आ सकती है।

मोरक्को के 'तांन्जिअेर' यात्रा के दौरान एक रोचक प्रसंग प्रीति सेनगुप्ता के साथ घटित होता है। प्रीति जी एक होटल के कमरे में रुकना चाहती थी लेकिन होटल के मालिक ने उन्हें कमरा देने से मना कर दिया। कारण पूछने पर बताया कि वह किसी अकेली स्त्री को होटल में कमरा नहीं देते। "हॉटेलना मालिके मने रूम आपवानी घसीने ना पाड़ी। केम ? तो कहे, हूं स्त्री हती अेटले। अे अेनी होटेलमां स्त्रीने अेक रात माटे पण रहेवा देवा मागतो न हतो।"[14] एक होटल मालिक ने प्रीति सेनगुप्ता को सिर्फ इसलिए कमरा देने से मना कर दिया, क्योंकि वह 'स्त्री' थी, यह घटना गहरी सामाजिक मानसिकता और धारणाओं की ओर इशारा करती है। दक्षिण अफ्रीका और इसके जैसे कुछ देशों में यह समस्या अब भी देखने को मिलती है, जहां अकेली महिला यात्रियों को सुरक्षा, तथा सामाजिक मान्यताओं के आधार पर होटल में ठहरने से रोका जाता है। इसके कई प्रमुख कारण है। कई समाज में अब भी यह मान्यता है कि, महिला को अकेले यात्रा नहीं करनी चाहिए। यदि कोई महिला अकेले होटल में रुकती है, तो उसे संदेह की नजर से देखा जाता है। ऐसा माना जाता है कि, उसका कोई 'अनुचित उद्देश्य' हो। ये धारणाएं पितृसत्तात्मक सोच की देन हैं, जहाँ महिला की स्वतंत्रता पर सवाल उठाया जाता है। कुछ होटल मालिक यह सोचते है कि, अगर वे अकेली महिला को कमरा देते हैं और कुछ घटना घटती है, तो उनकी होटल की छवि खराब होगी या उन्हें कानूनी मुश्किलों का सामना करना पड़ सकता है। इसलिए वे सावधानी के नाम पर महिला को ही मना कर देते हैं। अक्सर यह भी कहा जाता है कि, अकेली महिला की सुरक्षा की जिम्मेदारी होटल पर आ जाती है। यदि कुछ हो जाए, तो दोष होटल पर डाला जाएगा। इसलिए होटल प्रबंधन पहले से ही जोखिम नहीं लेना चाहता। इस तरह की प्रवृत्ति महिला यात्रियों के स्वतंत्रता के अधिकार का उल्लंघन है। ऐसे देशों को कड़क कानून बनाने चाहिए, लोगों में जागरूकता फ़ैलानी चाहिए, और सामाजिक बदलाव के प्रयत्न करने चाहिए। इक्कीसवी शताब्दी में दुनिया को यह समझना होगा कि, एक महिला का अकेले यात्रा करना उसका हक है, कोई अपराध नहीं। साथ ही, सरकारों को होटल उद्योग में लैंगिक समानता और सुरक्षा को सुनिश्चित करने के लिए ठोस नीतियाँ बनानी चाहिए।

‘उत्तर पूर्व भारत’ की यात्रा के दौरान लेखिका बताती है की, कैसे एक अकेली स्त्री को रात के समय तरह-तरह के विपरीत, अकल्पनीय परिस्थितियों का सामना करना पड़ता है। प्रीति जी ने यहां घटना का चित्रण है- “बे वार अड़धी राते मारा रूमनां बारणां ठोकायां हतां खरां। पहेली ज राते इम्फालमां दारू पीधेला कोई पुरुषे जोरजोरथी राते मारुं बारणुं खखडाव्युं हतुं, बेल दबाव्या करी हती ने ‘खोलो, खोलो’ ना घांटा पाडया कर्या हता। सवारे में होटेल बदली नाखी हती। सरस रूम अने वातावरण पण त्यां मड़यां हतां। भुतान जवानी आगली राते सिलिगुड़ी रहेवुं पड़ेलुं। अे तो उत्तर बंगाड़ ने बंगाडीनी होटेल। त्यां अेक गुजराती ग्रुप पण उतर्यु हतुं। अड़धी राते कोइअे बारणुं खखडाव्युं हतुं ने उघाड़वा खूब विनंती करी हती। पोते होटेलनो ज माणस हतो ने मारूं अेक ज मिनिटनुं काम हतुं अेम अेणे कहया कर्यु हतुं। अजाणी जग्याअे, अड़धी राते मारूं कोइने शुं काम होय ? में अेने कडक अवाजे जतां रहेवा ने सवारे वात करवा कहयुं। छेल्ले अे कहे, “दीदी, खोलता डर लागे छे ?” अरे, डर ना लागे पण अेटले शुं मारे खोलवानी मूर्खामी करवानी ?”[15]

ऐसी घटनाएं दर्शाती हैं कि, महिलाओं को अब भी यात्रा के दौरान सुरक्षा एवं आत्मरक्षा के लिए मानसिक रूप से सतर्क रहना पड़ता है। प्रीति सेनगुप्ता ने आत्मविश्वास और स्पष्टता के साथ स्थिति को संभाला, वह सराहनीय है। यह घटना यात्रा करने वाली हर महिला के लिए सबक है कि, ऐसी स्तिथि में डरने की बजाय समझदारी और साहस से जवाब देने की जरूरत होती है। समाज, ‘होटल उद्योग’ और सरकार को मिलकर कड़े नियम लागू करने चाहिए तथा महिलाओं की सुरक्षा को प्राथमिकता देनी चाहिए। स्वाभाविक है इस तरह की घटनाएं किसी भी व्यक्ति को झकझोर कर रख सकती है। दुनिया में इस तरीके के असामाजिक तत्व जगह-जगह देखने को मिलते हैं, लेकिन यात्रा पर निकली अकेली स्त्री के साथ इस तरीके का दुर्व्यवहार अशोभनीय है, और ऐसी घटनाएं मानवता को कलंक लगाती है, एक दूसरों मे विश्वास समाप्त करती है। लेखिका यात्रा के अंत मे एक सवाल छोड़ कर जाती है, जिसका जवाब हम सभी को ढूँढना होगा। “उत्तर-पूर्वमां फरतां अेटलुं तो जरूर लाग्युं के भारतीय स्त्री माटे भारतमां अेकलां फरवुं ते लोढ़ांनी करचो फक्त चाववा जेवुं ज नहीं पण पचाववा जेवुं छे। मने थयुं के आ रीते फरवामां हिंमतथी पण वधारे जरूर मक्कम निर्धारनी छे। आखा भारतमा सामाजिक अने सांस्कृतिक मानस माटे भ्रमण-प्रिय अेकाकी नारी कोई विचित्र उपस्थिति छे। कदाच मतिभ्रमवाडी पण। अेना साहसने, संवेदनोने, अेना जीवनानंदने, निजानंदने नवाजनारां केटला ?”[16] इस प्रसंग के द्वारा लेखिका वर्तमान समाज की मनःस्थिति का चित्रण कर रही है। आज दुनिया चाँद पर चली गयी, लेकिन स्त्रियों के प्रति लोगों का

दृष्टिकोण नहीं बदला। आज भी भारत जैसे लोकतांत्रिक और विविधतापूर्ण देश में एक महिला का अकेले घूमना, विशेष रूप से उत्तर-पूर्व जैसे क्षेत्र में, एक साधारण बात नहीं मानी जाती। प्रीति सेनगुप्ता इसे एक कठिन, चुनौतीपूर्ण और कई बार अस्वीकार्य अनुभव के रूप में प्रस्तुत करती हैं। लेखिका कहती है कि, एक भारतीय स्त्री के लिए अकेले यात्रा करना केवल 'लोढ़ांनी करचो' (यानी कठिन कार्य) नहीं है, परंतु उसे 'चाववु' (रुचिकर मानना) और 'पचाववु' (समझना और सहन करना) भी उतना ही मुश्किल है। यानी, समाज को न केवल महिला की यात्रा को स्वीकारना कठिन लगता है, परंतु उसे सहज रूप से समझना और उसका सम्मान करना भी एक चुनौती है। इस पूरे प्रसंग के माध्यम से भारतीय समाज को अब स्वीकारना होगा कि, महिलाएं भी पुरुषों की तरह स्वतंत्र रूप से सोच सकती हैं, निर्णय ले सकती है और जीवन का आनंद ले सकती है। उन्हें घूमने-फिरने का, दुनिया देखने और खुद के अनुभवों से सीखने का पूरा हक है। और यह हक किसी दया या विशेष अनुमति का मोहताज नहीं होना चाहिए। यह उनका नैसर्गिक अधिकार है।

इस तरह हम आलोच्य लेखिकाओं के यात्राओं के दौरान प्रत्यक्ष अनुभव की बात करते है, तो पाते है कि, इनके यात्रा के अनुभव में व्यापक भिन्नता है। इसका पूर्ण प्रभाव इनके लेखन में स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ता है। इनके कहीं कड़वे तो कहीं मधुर अनुभव है। जिसमें कही पुरानी धारणाओं के टूटने की बात है, तो कहीं नई धारणाओं का निर्माण भी होता है।

5.2 व्यापक जीवन : व्यापक जीवन' से तात्पर्य है कि यात्रा साहित्य केवल मार्गों, स्थलों या घटनाओं का विवरण भर नहीं होता है, यात्रा तो उस समाज, संस्कृति, इतिहास, राजनीति, पर्यावरण और मानव संबंधों के विस्तार को भी समेटे रहती है जिनसे यात्री गुजरता है। यात्रा के दौरान मिलने वाले लोगों की जीवनशैली, उनकी समस्याएँ, उनकी खुशियाँ, बोलियाँ, खानपान, रीति-रिवाज़ और संघर्ष ये सभी 'व्यापक जीवन' का हिस्सा होते हैं। इस तत्व के माध्यम से लेखक पाठक को वहाँ की जीवन को, उसकी पूरी जटिलता एवं विविधता के साथ सामने लाता है।

माला वर्मा और प्रीति सेनगुप्ता की यात्राओं में केवल स्थानों का वर्णन नहीं है, बल्कि वहाँ के समाज, धर्म, दर्शन और मानव व्यवहार की गहराई से प्रस्तुति होती है। दुनियां के अलग अलग हिस्से की यात्राएं करने के कारण इनके अनुभव में बड़ा विस्तार है। यही 'व्यापक जीवन' यात्रा साहित्य को एक सतही वर्णन से

ऊपर उठाकर साहित्यिक गहराई और मानवीय सरोकारों से जोड़ता है। आलोच्य लेखिकाओं के अनुभव यहां प्रस्तुत है।

टोक्यो महानगर होने के कारण यहा उपनगर से आने वाले व्यापारियों, छात्रों, नौकरीपेशा लोगों का आना जाना लगा रहता है। टोक्यो मे यातायात के साधन अत्यंत आधुनिक है, जो यात्री को पलक झपकते ही एक स्थान से दूसरे स्थान सुरक्षित रूप से पहुचा सकते है। माला वर्मा टोक्यो में परिवहन की सुचारु पद्धति से प्रभावित होती है, और कहती है- "टोक्यो में आम जनता के लिए आवागमन की हर सुविधा मुहैया करायी गई है। सार्वजनिक परिवहन सेवा इतनी साफ़-सुथरी और समय की पाबंद है कि आप दाँतों तले अंगुली दबा लें। चाहे वो कुशल ट्रेनें, अन्डर ग्राउण्ड ट्रेनें, बसें मोनोरेल, ट्रामें आदि ही क्यों न हों। टोक्यो या पूरे जापान में रेल-सेवा यातायात का एक प्रमुख साधन है, ख़ासकर टोक्यो का रेल सिस्टम विश्व में अपना एक विशेष स्थान रखता है।"[17] शिक्षण संस्थान एवं व्यापार उद्योग का केंद्र होने के कारण टोक्यो को समग्र रूप से सर्वश्रेष्ठ शहर माना जाता है। दुनिया में आदर्श परिवहन की शुरुवात की देन टोक्यो को माना जाता है, पिछले बीस-तीस वर्षों मे जापान मे कोई रेल लेट हुई हो ऐसा हमने नहीं सुना है। माला जी ने जापान में भ्रमण के दौरान जो अनुभव किया वह अद्भुद था। जिसका जिक्र वह अपने यात्रा संस्मरण में करती है।

माला वर्मा 'साउथ अमेरिका' यात्रा के दौरान विश्व धरोहर 'इग्वासु फॉल' के रमणीय दृश्य देखकर रोमांचित हो उठती है। इग्वासु फॉल, विश्व के सबसे भव्य और विशाल जलप्रपातों में से एक है। यह दक्षिण अमेरिका के दो प्रमुख देशों अर्जेंटीना और ब्राजील की सीमा पर स्थित है, और इग्वासु नदी पर बना है। यह जलप्रपात प्राकृतिक सौंदर्य से भरपूर एवं पारिस्थितिकीय दृष्टिकोण से भी अत्यंत महत्वपूर्ण स्थल है। माला जी इसका वर्णन प्रस्तुत करती है- "अर्जेंटीना और ब्राजील साइड में स्थित दोनों इग्वासु फॉल को एक साथ सन् 1984 में यूनेस्को ने विश्व धरोहर का खिताब दिया। इग्वासु फॉल कभी घने जंगलों के बीच घिरा हुआ था, जो अभी भी अपने प्राकृतिक स्वरूप को धारण किये हैं, अर्जेंटीना के ठीक दूसरी ओर ब्राजील का इग्वासु नेशनल पार्क है।"[18] सन् 1984 में अर्जेंटीना-ब्राजील के इग्वासु नेशनल पार्क को यूनेस्को द्वारा विश्व धरोहर स्थल घोषित किया गया, जिससे इसकी अंतरराष्ट्रीय महत्ता और संरक्षण की आवश्यकता को मान्यता मिली। इग्वासु फॉल आज न केवल एक प्रमुख पर्यटन स्थल है, बल्कि प्राकृतिक धरोहरों के संरक्षण का आदर्श उदाहरण भी है।

प्रीति सेनगुप्ता जी कहती है, प्रेम और वियोग के भाव केवल व्यक्ति से ही हो, ऐसा नहीं है। उनका मानना है की, यह सारे भाव किसी स्थान-जगह से भी हो सकते हैं। इस संदर्भ मे लेखिका ने अपना का मत इस प्रकार रखा है, "प्रेमनो अनुभव पामवो तेने अेक सभाग्य कही शकाय, ने अे साथे ज, मोड़ो वहेलो जे बीजो अेक अनुभव थवानों, ते छे विरहनो, प्रेम अने वियोगनी लागणीओ कांई व्यक्ति विषे ज होय ? अे स्थड विशे होई शके केम, वर्षोंथी देशने, वरने याद करी कारीने आ बे लागणीओमां झुर्या करिअे ज छीअेने।"[19] लेखिका जब वर्षों बाद जापान जाती है, तो वहाँ की स्मृतियाँ, अनुभव, रिश्ते और वहां की संस्कृति उनके मन के भीतर भावनात्मक रूप से बस गए है। यह अनुभव उनके लिए पुनः प्रेम में पड़ने जैसा होता है। एक स्थान के प्रति, जहाँ उन्होंने अपने जीवन का महत्वपूर्ण समय बिताया, गहरे संबंध बनाए, और आत्मिक शांति पाई थी। परंतु, इस प्रेम के साथ-साथ वियोग की वेदना भी जुड़ी है। जब वह जापान देश से वापस लौटती हैं, तो यह वियोग उन्हें भीतर तक स्पर्श कर जाता है। वह जानती हैं कि, यह पुनर्मिलन क्षणिक है, और यह देश फिर एक बार उनसे दूर हो जाएगा। यह अनुभव एक बार फिर विरह में ढल जाता है। इस बार किसी व्यक्ति के लिए नहीं, परंतु उस देश के लिए, जहाँ उनके जीवन का एक अमूल्य हिस्सा बसा है। इस तरह यात्राओं द्वारा व्यक्ति को भिन्न- भिन्न स्थानों से लगाव होना स्वाभाविक है, क्योंकि व्यक्ति जिस जगह पर अपने जीवन का कीमती वक़्त बिताता है, उसे वह स्थान प्रिय लगने लगता है। और उस स्थान को छोड़कर जाना किसी के लिए भी आसान नहीं होता, यह पीड़ादायी ही होता है। समान अनुभव प्रीति जी यहां व्यक्त करती है। जापान देश से लेखिका को अधिक प्रेम है। जापान प्रीति सेनगुप्ता का प्रिय देश है, प्रिय देश होने के कई कारण है- स्थानीय लोग, जापान की संस्कृति, वहां की चित्रशैली, वहां की 'काबूकी' ओर 'नोह' नामक नाटक कला, तथा स्वच्छ मंदिर परिसर और अनेक स्थान वहां की प्राकृतिक सौंदर्यता, वहां का आकर्षण इन कारणों की वजह से लेखिका को जापान बार-बार जाना अच्छा लगता है। जापान में उनके कई मित्र भी है, जिससे उन्हें ऐसा प्रतीत ही नहीं होता, की वह विदेश मे है। प्रीति सेन गुप्ता टोक्यो शहर की विशेषता का वर्णन इस प्रकार से करती है- "दुनियानां गीच वसतिवाडा शहेरोंमांनु अेक अेवु टोकियो प्रतिश्रमी, शिष्ट, शिस्तबद्ध लोकोणे कारने शक्ति अने सामर्थ्य, आनंद अने उल्लास, कार्यरतता अने निरांतनुं महाक्रीड़ांगण बनी रहे छे। शांतिवाडा, ओछी वस्तीवाडा, वधारे प्राकृतिक सौन्दर्य अने अैतिहासिक स्मारकोवाडा स्थानों जपानमां घणां मड़ी आवे, पण महानगर टोकियोमां जपाननां नागरिकों तेम ज आगंतुको माटे अेक आश्चर्यजनक संमोहक विस्मय छे, अदम्य चुंबकत्व छे।"[20] लेखिका ने टोक्यो शहर को 'महाक्रीड़ागण' की संज्ञा दी है, क्योंकि, यह शहर निरंतर क्रियाशील और ऊर्जा से भरपूर है। यहां हर कोई अपने कर्तव्य के प्रति सजग है। जापान में ऐसे

अनेक स्थल है, जिनका वातावरण शांत है। यहां अनगिनत ऐसे स्थान है, जो प्राकृतिक सौंदर्य से भरपूर, कम भीड़भाड़ वाले और ऐतिहासिक स्मारकों से सजे हुए है। ये स्थल अपनी विशेष पहचान रखते हैं। टोक्यो अपने आधुनिक, स्वरूप के कारण आगंतुकों को अत्यंत आकर्षित करता है।

यात्राओं में व्यापक जीवन का महत्वपूर्ण स्थान होता है। माला वर्मा व प्रीति सेनगुप्ता की यात्राओं में व्यापक जीवन के तत्व का समावेश कई जगह देखनें को मिलता है। और यह स्वाभाविक रूप से प्रस्तुत है। दुनियां के प्रत्येक हिस्से में कुछ न कुछ नया है। मानव के तौर पर दुनियां भर का मनुष्य भले ही समान हो इसके अतिरिक्त उसके जीवन के विभिन्न पहलुओं में व्यापक अंतर है। इसका वर्णन हमें आलोच्य लेखिकाओं के यात्रा साहित्य में दिखाई पड़ता है।

5.3 कलात्मकता : कलाएं दुनिया को और अधिक सुंदर बनाती है। यह विश्व अनेक कलाओं के द्वारा सजाया गया है। कलाओं के द्वारा इसको नया रूप दिया गया है। कलाएं हमें आनंदित व आह्लादित करती है। सृजन शील बनाती है। व्यक्ति के हृदय का विस्तार करती है। उससे उन्मुक्त होकर सोचने का विचार देती है। कलाओं से मनुष्य का रागात्मक संबंध रहा है। इस दुनिया में अनेक आश्चर्यचकित कर देने वाली कलाओं का निर्माण हुआ है। जब कोई यात्रा साहित्यकार भाषा की लोच, वर्णन की सजीवता से बिंबों और प्रतीकों का प्रयोग करते हुए संवादों की रोचकता तथा वातावरण का चित्रण एवं भावनात्मक गहराई को प्रस्तुत करता है, तब वहाँ कलात्मकता के तत्व का जन्म होता है। लेखक जब कलात्मकता का सहारा लेता है, तो वह केवल बताना नहीं चाहता, वह दिखाना चाहता है। उसका उद्देश्य पाठक के भीतर जिज्ञासा, भावनात्मक संबंध और सौंदर्य-बोध उत्पन्न करना होता है। वह स्थान विशेष की सांस्कृतिक, सामाजिक तथा ऐतिहासिक महत्ता को भी इस प्रकार प्रस्तुत करता है कि पाठक को उस स्थान का जीवंत अनुभव हो। आलोच्य लेखिकाओं ने दुनिया की कलाओं का मनमोहक वर्णन अपनी यात्राओं में किया है, जिसका विवेचन इस प्रकार से है –

माला वर्मा 'मलेशिया सिंगापुर' यात्रा के दौरान वहां की 'बाटिक फैक्ट्री' में जाती है। जहां कई पुरुष व महिलाएं कपड़ों पर रंगाई-छपाई का कार्य कर रहे थे। इसका वर्णन लेखिका इस तरह से करती है- "टिन फैक्टरी के करीब ही एक बाटिक फैक्टरी थी। जहाँ कई पुरुष व महिलाएं कपड़ों पर रंगाई-छपाई का कार्य कर रहे थे। वहाँ के एक कर्मचारी ने बिल्कुल एक नये कपड़े पर ताज़ा रंगों से डिज़ाइन बना कर दिखाया उस कमरे में लकड़ी के सैकड़ों ब्लॉक पड़े थे। जिनपर कई सुन्दर डिज़ाइन खुदे हुए थे। हमारे देखते ही देखते उक्त कारीगर ने तेज़ी से हाथ चलाते हुए एक पूरी सफेद चादर को डिज़ाइन से भर दिया। उसकी

सुन्दर कारीगरी देखने लायक थी। इस तरह के कार्य हमारे राजस्थान गुजरात में खूब होते हैं। मूलतः बाटिक कला का जन्म शायद थाइलैंड में हुआ था।"[21] प्रस्तुत प्रसंग के माध्यम से माला वर्मा ने भारतीय हस्तशिल्प, परंपरागत कला की महत्ता को रेखांकित करती हैं। इस वर्णन से लेखिका यह भी बताना चाहती हैं कि हमारे देश में विशेष रूप से राजस्थान और गुजरात जैसे राज्यों में ऐसी कलाएँ पारंपरिक रूप से जीवंत है, और निरंतर विकसित हो रही हैं। भारत की सांस्कृतिक विरासत, जो बुनाई, रंगाई, कढ़ाई और छपाई जैसी कलाओं में बसती है, यह उसकी एक मिसाल है। साथ ही, माला जी उल्लेख करती हैं कि बाटिक कला का मूल थाइलैंड में है, तो वह वैश्विक सांस्कृतिक आदान-प्रदान की ओर भी संकेत करती हैं, कि कैसे एक कला विश्व के विभिन्न क्षेत्रों में फैलकर अपनी पहचान बनाती है। माला जी आगे कहती है, 'हमारे देखते ही देखते कारीगर ने एक पूरी सफेद चादर को डिज़ाइन से भर दिया' लेखिका यहां अद्भुत दक्षता, कलात्मकता और श्रम की महिमा को रेखांकित कर रही होती हैं। अंततः कह सकते है, यह प्रसंग केवल एक फैक्टरी का दौरा नहीं है, यह भारतीय पारंपरिक कारीगरी, श्रम के सौंदर्य, और कला के जीवंत रूप की सराहना है। लेखिका चाहती हैं कि पाठक इन कलाओं की सुंदरता और महत्व को पहचानें, उन्हें केवल वस्त्रों की छपाई भर न समझें, बल्कि उसमें छिपे श्रम, रचनात्मकता और सांस्कृतिक गौरव को महसूस करें। यही इस प्रसंग की मूल भावना है जो माला जी ने पाठकों के सामने प्रस्तुत की है।

माला वर्मा अमेरिका भ्रमण के दौरान स्वतंत्रता की मूर्ति को देखकर कहती है कि - "स्टैच्यू ऑफ लिबर्टी या स्वतन्त्रता की मूर्ति जो न्यूयार्क का लैंडमार्क कहलाती है दरअसल पूरे अमेरिका का ही प्रतीक चिह्न बन गई है। अपने एक हाथ में मशाल और दूसरी में पुस्तक लिये हुए इस विशालकाय नारी प्रतिमा को देखकर हम हिन्दुओं के मन में एक देवी का ख्याल आता है और हम बरबस कह उठते है- ये स्वतन्त्रता की देवी है, ठीक वैसे ही जैसे हमने अपने भारत को भी भारतमाता का रूप दे दिया है जिनके एक हाथ में तिरंगा है तथा दूसरा हाथ आशीर्वाद की मुद्रा में उठा हुआ है।"[22] मूर्तियाँ मात्र पत्थर की आकृतियाँ नहीं होतीं, वे भावनाओं, तथा राष्ट्रीय आत्मा की मूर्त अभिव्यक्तियाँ होती हैं। जिस प्रकार भारतमाता का चित्र एक आदर्श राष्ट्र की कल्पना को दर्शाता है, जहाँ एक हाथ में तिरंगा और दूसरा आशीर्वाद की मुद्रा में है। वैसे ही 'स्टैच्यू ऑफ लिबर्टी' भी स्वतंत्रता, न्याय और मानवाधिकारों के मूल्यों को मूर्त रूप देती है। यह प्रसंग सांस्कृतिक तुलनात्मक दृष्टिकोण को उजागर करता हैं। माला वर्मा कहती हैं कि, 'हमारे मन में एक देवी का ख्याल आता है' लेखिका यह बताना चाहती हैं कि भारत में हम मातृभूमि को देवी-'भारत माता' के रूप में देखते हैं। वैसे ही अमेरिका में स्वतंत्रता की प्रतिमा एक आदर्श रूप में प्रतिष्ठित है। यह तुलना

बताती है कि, चाहे देश अलग हों, परंतु राष्ट्रीय प्रतीकों के प्रति भावनाएं, और गौरव की अनुभूति सार्वभौमिक होती है।

ब्राजील यात्रा के दौरान माला जी ईसा मसीह की प्रसिद्ध मूर्ति का वर्णन इस तरह से करती है। "सन् 1926 से 'क्राइस्ट द रेडिमर' अपनी बाहें फैलाये खड़े है जो सबके लिए स्वागत सूचक मूर्ति है और यह सभी आपद-विपद ग्रस्त मस्तिष्क को मुक्ति का संदेश देती है।"[23] क्राइस्ट द रेडीमर यह मूर्ति शांति का प्रतीक है। आज यह मूर्ति सिर्फ रियो शहर के लिए ही नहीं परंतु पूरे ब्राजील देश की निशानी है। जो आपस मे भाई चारा का संदेश देती है। और समभाव का प्रतीक निशानी है। ऐसी समान मूर्ति हमारे देश भारत में भी है जिसे 'सरदार वल्लभभाई पटेल' के नाम से जाना जाता है। स्टैच्यू ऑफ़ यूनिटी भारत के गुजरात राज्य के नर्मदा जिले में स्थित केवड़िया में नर्मदा नदी के तट पर बनी है। इसे दुनिया की सबसे बड़ी प्रतिमा का दर्जा मिला है। 'स्टैच्यू ऑफ़ यूनिटी' का निर्माण भारत के लौह पुरुष सरदार वल्लभभाई पटेल को श्रद्धांजलि स्वरूप किया गया है। वे स्वतंत्र भारत के पहले उपप्रधानमंत्री और गृहमंत्री थे, जिन्होंने देश की 562 रियासतों को एकजुट कर भारतीय गणराज्य की नींव रखी। यह मूर्ति उनके योगदान और नेतृत्व की अमिट निशानी है। स्टैच्यू ऑफ़ यूनिटी भारत की एकता और अखंडता का प्रतीक भी है। इस मूर्ति के निर्माण का उद्देश्य भावी पीढ़ियों को यह याद दिलाने का एक प्रयास है कि, भारत की एकता और अखंडता कितनी कठिनाई से स्थापित हुई थी। यह प्रतिमा आज भारत की शान और गौरव का प्रतीक बन चुकी है। इस तरह क्राइस्ट द रेडीमर की मूर्ति का भी अपना एक इतिहास है।

हम कह सकते है की, 'सरदार पटेल' और 'क्राइस्ट द रेडीमर' की मूर्ति दुनिया में शांति, मुक्ति और वैश्विक एकता के विचार को सामने लाती हैं। यह मूर्ति धार्मिक सीमाओं से ऊपर उठकर पूरी मानवता को अपनाने और दुःखों से ऊपर उठने की प्रेरणा देती है। माला वर्मा इसे केवल धार्मिक प्रतीक नहीं मानतीं, बल्कि उनकी दृष्टि से ये वैश्विक मानवीय मूल्य की मूर्ति हैं, जिसमे एकता, समानता, भाईचारा के रूप समाहित है।

दुनियां के अलग अलग हिस्से में कला के उत्कर्ष का हमें दर्शन होता है साउथ अमेरिका यात्रा में माला वर्मा लिखती है कि - "आर्ट डेको एक ऐसी दृश्य कला, वास्तुकला और डिजाइन की शैली है जो प्रथम विश्वयुद्ध के ठीक पहले फ्रांस में दिखाई दी थी। इसमें आधुनिक शैलियों को बेहतरीन शिल्प कौशल और समृद्ध महंगी सामग्रियों के साथ जोड़कर उसकी संरचना करना होता है। आर्ट डेको एक सजाने की कला है जिसमें उसकी गुणवत्ता व छवि और भी बेहतर तरीके से उभर कर आती है। इस आर्ट डेको ने इमारतों, फर्नीचर, गहनों, गाड़ियों, मूवी थियेटरों आदि बहुत जगहों पर अपना प्रभाव जमाया।"[24] आर्ट डेको शैली

शिल्प कौशल का प्रतिरूप है। यह शैली प्रथम विश्व युद्ध के ठीक पहले फ्रांस में उभरी और धीरे-धीरे वैश्विक रूप से लोकप्रिय हो गई। यह शैली पारंपरिक कलाओं से अलग एक ऐसी पहचान प्रस्तुत करती है जो समृद्धि, तथा आधुनिक जीवनशैली का प्रतिनिधित्व करती है। इसमें सादगी के बजाय विलासिता और आकर्षक डिजाइन की प्रमुखता होती है। माला वर्मा जिस आर्ट डेको शैली की बात करती हैं, वह आज भारत के बड़े-बड़े शहरों में जीवित रूप से देखी जा सकती है। विशेषकर मुंबई में। यह शैली भारत की औपनिवेशिक विरासत और शहरी विकास को एक साथ जोड़ती है। यह आधुनिकता और परंपरा का सुंदर संगम है, जो आज भी वास्तुकला प्रेमियों को आकर्षित करता है।

कोरिया, चीन और जापान जैसे देशों में ब्रश पेंटिंग बहुत लोकप्रिय है, और चित्रकला की यह कला इन देशों की शान और शालीनता मानी जाती है। प्रीति सेनगुप्ता पेंटिंग की विशेषता का वर्णन करती है- "स्वप्न जेवा, हलका घुम्मसमां थइने क्षितिज साथे मड़ी जता। कोरिया, चीन, जपान जेवा देशमां '(brush-painting)' खूब प्रचलित छे, अने अे चित्रकड़ाने आ देशोनी लावण्य अने लालित्यसभर विशिष्टता कही शकाय। आ शैलीनां, फक्त काड़ी सहीथी पींछी वडे सफेद कागड़ पर करेलां मुक्त-हस्त चित्रोमां निसर्गनां विविध द्रश्यो अने रूपों आलेखायेलां होय छे।"[25] कहना सार्थक ही होगा की, ब्रश पेंटिंग कोरिया, चीन, जापान जैसे देशों की दार्शनिक दृष्टि एवं सौंदर्यबोध का प्रतिबिंब है। इस कला में नदियाँ, पहाड़, पेड़, फूल, पक्षी आदि के द्वारा यह दर्शाया जाता है कि, मानव केवल प्रकृति का एक भाग है, उससे अलग नहीं। इसलिए इन चित्रों में भावनात्मक जुड़ाव और सादगी का चित्रण होता है। यह चित्र दर्शक को शांति और ध्यान के मार्ग पर ले जाता है। कम में अधिक व्यक्त करना ब्रश पेंटिंग की शैली की खासियत है। इसमें बहुत कम रेखाओं और रंगों का प्रयोग होता है, तब भी उसमें गहराई और गति के भाव स्पष्ट झलकते हैं। यह पूर्वी सौंदर्यशास्त्र की वह विशेषता है, जहाँ खाली स्थान भी उतना ही अर्थपूर्ण होता है, जितना रंग और रेखाएँ। ब्रश पेंटिंग प्रकृति प्रेम और सौंदर्यबोध का जीवंत माध्यम है। यही कारण है कि, आज भी जापान कोरिया जैसे देशों में इसे पसंद किया जाता है।

क्योटो जापान की पारंपरिक कुम्हारी कला का एक महत्वपूर्ण केंद्र है। यहाँ के 'क्योयाकी' और 'कियोमिज़ु-याकी' बर्तन न केवल उपयोगिता के लिए बल्कि कला और सौंदर्य के लिए भी जाने जाते हैं। ये बर्तन जापानी शिल्प की बारीकी, संतुलन और प्रकृति के प्रति प्रेम को दर्शाते हैं। इस संदर्भ मे प्रीति सेनगुप्ता जी लिखती है "कयोटो अेना कियोमिझुयाकी कहेवाता माटीनां वासणो माटे घणु ख्यातनाम छे।"[26] कियोमिझुयाकी कला का जीवंत रूप हैं। इनमें मिट्टी की सुंदरता, रंगों की सौम्यता भरी डिज़ाइन

होती है, जो इन्हें सामान्य बर्तनों से विशिष्ट बनाते है। इन बर्तनों का निर्माण हाथ से किया जाता है, उन्हें पारंपरिक भट्टियों में पकाया जाता है। यह प्रक्रिया कलाकार के कौशल का परिचय देती है। कियोमिज़ुयाकी जैसे शिल्प जापान की कलात्मकता एवं सौंदर्यभावना कों चिन्हित करते है।

प्रीति सेनगुप्ता आगे 'सान फ्रान्सिस्को द असिसि' के एक धार्मिक स्थल (गिरजाघर) के अनुभव का वर्णन करती है। "अेक गलीमांथी वडीने हूं सान फ्रान्सिस्को द.असिसि देवडननी सामे आवी। इमारत सुंदर हती। अेनुं स्थापत्य विशिष्ट हतुं। अेनी ऊपर घुम्मट नहोतो अने अेनी मुख्य दीवाल पर्वतना आकारे ढड़ती जती हती। अंदरथी स्थान सादुं अने सुंदर हतुं। झिणुं सफेद कापड़ कमानोनी जेम लटकावेलुं हतुं। वेदी पर अने आसपास अनेक सफेद, दाऊदी जेवां क्रिसान्थमम फूलोनां मोटां मोटां गुच्छ गोठवेलां हतां। अनेक मीणबत्तीओ सडगावाई रही हती। सांध्य-प्रार्थनानो समय कदाच थवा आव्यो हतो।"[27] प्रीति जी ने यहां पर स्थापत्य शैली का बारीकी से विवरण दिया है। लेखिका सबसे पहले इमारत के स्थापत्य की विशिष्टता को रेखांकित करती है। वह कहती हैं कि इमारत सुंदर और अद्भभूत है, लेकिन उसमें आम चर्चों की तरह घुम्मट नहीं है। उसकी दीवारें पर्वत की ढलान जैसी प्रतीत होती है। अंदर का वातावरण शांत नजर आता है। फूलों के गुच्छे इस स्थान को पवित्रता और सौंदर्य का अहसास कराते है। मोमबत्तीयाँ जल रही हैं, जिससे प्रतीत होता है कि, यह ध्यान और प्रार्थना का समय है। वातावरण में पवित्रता और ऊर्जा व्याप्त है। लेखिका इन विवरणों के माध्यम से यह बताना चाहती हैं कि, यह स्थान व्यक्ति के भीतर की शांति और आस्था को जाग्रत करता है। प्रीति जी ने पूरे प्रसंग का वर्णन रोचक ढंग से किया है। उनके इस विवरण से पता लगता है की, लेखिका को स्थापत्य शैली का बारीकी से ज्ञान है।

कलाएं मनुष्य के ऐश्वर्य का प्रतिनिधित्व करने वाली होती है। कलाओं का जन्म साधना से होता है। यही कारण होता है कि इनमें परिष्कार होता है। माला वर्मा व प्रीति सेनगुप्ता के यात्रा साहित्य में अन्य विशेषताओं के समान कलात्मकता को भी विशेष रूप से देखा गया है और वर्णित भी किया गया है। कला के प्रति आलोच्य लेखिकाओं के मन में जिज्ञासा है। उसे महसूस करने का भाव है। जो उन्हें निरंतर यात्रा करने के लिए उत्साहित करता है।

5.4 पात्र एवं चरित्रांकन : यात्राएँ एक जैसी नहीं होतीं, वे अनेक प्रकार की होती हैं, और अनगिनत स्थानों से जुड़ी होती हैं। हर स्थान की अपनी-अलग सामाजिक व्यवस्था होती है, और हर समाज में कुछ न कुछ अंतर अवश्य देखने को मिलता है। माला वर्मा और प्रीति सेनगुप्ता जब यात्रा पर निकलती हैं, तो उन्हें कई प्रकार के लोग मिलते हैं। इन लोगों से बातचीत होती है, संबंध स्थापित होते हैं और कई सुखद

एवं कटु अनुभव प्राप्त होते हैं। इन स्थानीय लोगों में से कुछ-कुछ इनके यात्रावृत्तांतों में पात्र के रूप में उपस्थित है। आलोच्य लेखिकाओं ने उनका चरित्रांकन भी किया है। प्राप्त यात्रावृत्तांतों में पात्र व चरित्रांकन इस प्रकार है-

माला वर्मा जापान यात्रा के दौरान 'गीशा' नामक स्थानीय पात्र को देखती है। गीशा (Geisha) पारंपरिक मनोरंजन करने वाली कलाकार महिलाएँ होती हैं, जो नृत्य, संगीत, वार्तालाप और सांस्कृतिक कलाओं में निपुण होती हैं। गीशाओं की परंपरा सत्रहवीं-अठरहवीं शताब्दी में शुरू हुई। विशेषकर क्योटो के गियोन और पोंटोचो जिलों में यह प्रचलन मे था। मूल रूप से ये पुरुष मनोरंजनकर्ता थे। लेकिन बाद में महिलाएँ इस पेशे में प्रमुख हो गई। माला वर्मा के अनुसार "कुछ सुन्दर लड़कियाँ लोगों की सेवा व मनोरंजन के काम में दक्ष हो जाती हैं और ये गीशा कहलाती हैं। गीशा काफ़ी स्कील्ड इन्टरटेनर हैं, यानी ये आपकी आवभगत, नाचना-गाना बजाना वगैरह कामों में निपुण होती हैं। आपके मन को मोहित करती हैं, मगर किसी तरह का शारीरिक सम्बन्ध नहीं। इस मनोरंजन के लिए ही वे पैसे लेती हैं।"[28] वे पारंपरिक किमोनो ड्रेस पहनती हैं और चेहरे पर सफेद मेकअप करती हैं। गीशा जापानी संस्कृति की प्रतीक मानी जाती हैं, उनका इतिहास सैकड़ों वर्ष पुराना है।

प्रीति सेनगुप्ता इजिप्त के 'लकझर' गांव का अपना अनुभव यहां प्रस्तुत करती है, वहां के लोगों के साथ संगीत में उन्हें सुर-ताल देती है, जिस से संगीतमय वातावरण निर्मित होता है। "धीरे धीरे फतेह अरबीमां गावा लाग्यो। में पण सूर पुराव्यो, ताल आप्यो। सहेज वार साढ साथे बंधायेलुं दोरडुं पकड़ी नौका चलाववानो शोख कर्यो। आँखों मींचीने पड़ी रही। फोटा लिधा। आ आखो अनुभव अेटलो शांतिदायक हतो के मने जाने कोई विशेषाधिकार मड़ी गयो होय अेम लाग्युं। मर्मस्पर्शी संवेदनथी आँखमां आंसु आवी गया।"[29] प्रीति सेनगुप्ता ने इस प्रसंग के माध्यम से आत्मा और प्रकृति के गहरे जुड़ाव, संगीत की शक्ति और क्षणिक लेकिन अमिट अनुभूति को अत्यंत प्रभावशाली ढंग से व्यक्त किया है।

प्रीति जी जापान यात्रा के समय स्थानीय मित्र 'शोजी' के घर रुकती है। शोजी के परिवार वाले लेखिका को खूब स्नेह करते है, वहां का पारंपरिक किमोना ड्रेस भी पहनाते है। लेखिका ड्रेस पहनने के बाद 'शोजी' के माता-पिता को पारंपरिक तरीके से कमर से झुक कर प्रणाम करती है। उस समय सभी हँसने लगते है। पूरा वातावरण हासप्रद हो जाता है। ये क्षण बहुत ही आनंददायी होते है। उस शाम शोजी एवं परिवार के सारे सदस्य ओर लेखिका एक रेस्टोरेंट में भोजन करने जाते है। उस समय प्रिती सेनगुप्ता को भारतीय भोजन की याद आती है, ओर वह कहती है, "आपणा भजियां जेवा तेम्पुरा, स्वादिष्ट बटाका,

सोया सॉस साथे भुंजेलुं रिंगण, बाफेलुं तोफु अेटले के 'Bean-curd' अथवा अेक जातना कठोडमांथी बनावेलुं दहीपनीर, तड़ेलुं-तोफु, जपानमां ज मड़तुं बीजु अेक कंद वगेरे। साथे हूंफाड़ी साके रांधेला चोखामांथी बनावेली मदिरा-हती।"[30]

लेखिका विदेश में होने के बावजूद भी भारतीय भोजन को भारतीय व्यंजन को बहुत याद करती है। एवं जापान में रहते हुए उन्हें भारतीय व्यंजन निरंतर याद आते हैं। मनुष्य का यह सहज स्वभाव है की वह जहां कही भी होता है, उसे अपनी पृष्टभूमि की याद हमेशा आती है। विदेश यात्रा के दौरान जब व्यक्ति एक अलग संस्कृति अलग भाषा और खानपान से घिरा होता है, तब उसे अपने देश की छोटी-छोटी चीजें भी बहुत महत्वपूर्ण लगने लगती हैं। प्रस्तुत प्रसंग में प्रीति जी जापान में है, जहाँ उन्हें विविध और आकर्षक व्यंजन मिल रहे हैं, जैसे कि 'तेम्पुरा' (जो हमारे भजिया जैसा है), स्वादिष्ट बटाका, 'भुजेलु रिंगण' (भुना बैंगन), तोफु, 'एक प्रकार से कठोड में से बनाया हुआ दहीपनीर'। साथ ही वहां की पारंपरिक मदिरा जिसे चावल से बनाया जाता है। फिर भी इन सभी व्यंजनों के बावजूद प्रीति जी को भारतीय भोजन की याद आती है। इसका कारण भोजन से जुड़ी हुई भावनाएं हैं। भारतीय भोजन में जो मसालों की विविधता, सुगंध की आत्मीयता और पकाने की विधियों में जो अपनापन होता है, वह किसी भी विदेशी भोजन में अनुभव नहीं किया जा सकता। हर व्यंजन के साथ हमारे जीवन की कोई ना कोई स्मृति जुड़ी होती है। माँ के हाथ का खाना, त्योहारों की थाली, गर्मा-गर्म चाय के साथ भजिया, या बारिश में खिचड़ी-पापड़ का आनंद। ये सारी बातें मन को छू जाती हैं। विदेश में स्वादिष्ट भोजन मिलने के बावजूद वह मन को वैसा संतोष नहीं दे सकता, जैसा अपने देश का साधारण भोजन देता है। वहाँ की रसोई की गंध, परोसे जाने का तरीका, सब कुछ नया और अलग होता है, जिससे एक समय के बाद व्यक्ति अपने 'स्वाद' के साथ-साथ अपने 'संवेदन' में कमी अनुभव करने लगता है। इसलिए प्रीति जी को बार-बार भारतीय भोजन की याद आती है। यह केवल भूख का मामला नहीं है, परंतु भावनात्मक जुड़ाव के कारण ऐसा है, जो व्यक्ति को उसकी संस्कृति, परिवार और अपनेपन की ओर खींचता है। यही कारण है कि, विदेशी भोजन, भारतीय भोजन का स्थान नहीं ले सकता, क्योंकि उसमें स्वाद के साथ-साथ स्मृति जुड़ी होती है।

कई बार यात्रा के दौरान विचित्र अनुभव होते है, स्थानीय लोग कभी-कभी बाहरी व्यक्ति को देखकर डर जाते हैं। मनुष्य का स्वाभाव ऐसा है की, वह अंजान व्यक्ति को देखकर एकदम सतर्क हो जाता है। खास कर छोटे बच्चें और बुजुर्ग। समान अनुभव यहां पर प्रीति सेनगुप्ता को होता है, जिसका वर्णन लेखिका यहां करती है, "अेक साधारण कपड़ां पहेरेली वृद्ध जेवी स्त्री उभी हती। कदाच टोक्योना कोई परामांथी

आवी हशे तेम लाग्युं। मने पोतानी तरफ आवती जोइने अेना मोढा पर जाने भयनो भाव छवायो। पोते अंग्रेजी बोलती न हती, ने आ परदेशी व्यक्ति अेने अंग्रेजीमां कंई पुछशे-बाप रे, पोते शुं कहेशे ? कंईक आवा विचार अेना मनमां होय तो नवाई नहीं। अेनी पासे जईने में शुद्ध निहोन्गोमां काबुकी नाट्यगृहनी दिशा पूछी। अे सांभड़ता ज अेना मुखभाव तद्न बदलाई गया।"[31] इस प्रसंग के माध्यम से लेखिका, मानवीय अनुभव से परिचित कराती है। साथ ही भाषाई सम्मान और मानवीय जुड़ाव की शक्ति से अवगत कराती है। एक विदेशी देश जहाँ भाषा, और जीवनशैली सब कुछ अलग है, वहाँ संवाद की बाधा भावनात्मक दूरी उत्पन्न कर सकती है। यहाँ एक साधारण कपड़े पहने वृद्ध जापानी स्त्री खड़ी है, जो शायद टोक्यो के किसी उपनगरीय इलाके से आई है। जब वह प्रीति सेनगुप्ता जी को अपनी ओर आते देखती है, तो उसके चेहरे पर भय, चिंता और संकोच के भाव उभरते हैं। वह अंग्रेजी नहीं बोल सकती और यह सोचकर घबरा जाती है कि, एक विदेशी उससे अंग्रेजी में कुछ पूछेगी और वह उत्तर नहीं दे पाएगी। इस प्रकार की परिस्थिति आमतौर पर कई लोगों के साथ होती है, जब वे खुद को संवाद के मामले में असहाय महसूस करते है। लेकिन जैसे ही लेखिका शुद्ध जापानी भाषा 'निहोन्गो' में उससे 'काबुकी नाट्यगृह' का रास्ता पूछती है, उस वृद्धा के चेहरे के भाव बदल जाते हैं। उसकी आँखों में भय की जगह अपनापन और आत्मीयता आ जाती है। यह बदलाव दर्शाता है कि, जब कोई व्यक्ति दूसरे व्यक्ति की भाषा में संवाद करता है, तो वह दो संस्कृति के बीच पुल निर्माण जैसा कार्य होता है। इस तरह की घटना से लोगों में सम्मान, समझदारी और जुड़ाव भी बढ़ता है। लेखिका इस प्रसंग के माध्यम से यह बताना चाहती हैं कि, भाषा दिलों को जोड़ने का साधन है। जब हम किसी की मातृभाषा में उससे बात करते है, तो हम उसे सम्मानित करते हैं। यह छोटा सा प्रयास दूसरों को सहज, सुरक्षित महसूस कराता है। ऐसे प्रयास से एक समाज को दूसरे समाज के निकट लाया जा सकता है। अंततः यह दर्शन यही सिखाता है कि, सहानुभूति, आदर एवं समझ किसी भी विदेशी भूमि में हमारे अनुभव को सरल बनाता है। वहाँ के लोगों के दिलों तक पहुँचने का मार्ग भी स्थापित करता है।

प्रीति सेनगुप्ता 'यूगोस्लाविया' यात्रा के दौरान, समाज के एक कड़वे यथार्थ को उजागर करती है। वंचित वर्ग की कठोर जीवन परिस्थितियाँ और इन परिस्थितियों के कारण उनके व्यवहार में आई कठोरता, स्वार्थ और संघर्ष का चित्रण यहां देखने को मिलता है। "अेक रस्ता पर अेक जिप्सी जेवी छोकरी अेक नाना बाड़कने ऊंचकीने जती हती, तेनो में फ़ोटो पाड़यो, अने पैसा आप्या। में ओढेली शाल अे मागवा मांडी। अेनुं मोढुं जराये दयामनु न हतुं, अेना पर जबराई अने दादागीरी हतां। कदाच दुष्कर दुनियामां टकी रहेवा

माटे अेनी ज जरूर छे।"[32] लेखिका सड़क पर एक जिप्सी (घुमंतू) जैसी लड़की को देखती है, जो एक छोटे बच्चे को गोद में लिए जा रही है। यह दृश्य कोमल, ममता का प्रतीक था। लेकिन जब लेखिका उस लड़की की तस्वीर लेती है, और उसे पैसे देती है, तब वह लड़की प्रीति जी से शाल माँगती है, जो उन्होंने ओढ़ रखी थी। इस घटना से प्रीति जी चौंक जाती है। क्योंकि उस लड़की के चेहरे पर दयाभाव का अभाव था। उसके मुखमंडल पर कोई कृतज्ञता, लज्जा, ओर नम्रता नहीं दिख रही थी। इस घटना से यहां जबरदस्ती और लुच्चई का भाव स्पष्ट दिखाई देता है।

'मोरक्को' यात्रा के दौरान 'अब्दुल' नामक लड़का, प्रीति जी की मदद करने की भावना से उनके पास आता है। प्रीति सेनगुप्ता मना करती है, तब वह अपना परिचय देते हुए, खुद को एक विद्यार्थी बताता है। लोगों को ठगने, बेवकूफ बनाने का यह प्रचलित तरीका है। लेखिका के मना करने पर भी वह उनकें के साथ घूम-फिर रहा था। उसने लेखिका की 'बैग' उठाना चाहा, 'कैमरा बैग' पकड़ने की कोशिश की, लेकिन प्रीति जी ने मना किया और कहां की खुद का सामान स्वयं उठाना चाहिए, दूसरों से उठवाना ठीक नहीं है। इस तरह अब्दुल लेखिका के साथ सभी स्थान पर साथ में चल रहा था। लेखिका खुद के भोजन और चाय कॉफी के पैसे ही दे रही थी अब्दुल के पैसे नहीं दे रही थी। अब अब्दुल लेखिका से आग्रह करता है की, वह 'घोड़ा गाड़ी' की सेर करना चाहता है। कहता है, वह आधे पैसे देगा, बाकी के आधे वह लेखिका से माँगता है। प्रीति जी उसे सौ 'दिरहाम' लगभग सौ रुपए देती है, और वों लड़का घोड़ा गाड़ी लाने के बहाने वहां से फरार हो जाता है। काफी समय बीत जाने के बाद भी अब्दुल के वापस नहीं आने पर लेखिका को ज्ञात होता है कि, अब अब्दुल नहीं आएगा और उसने बाकी प्रवासियों की तरह मुझे भी बेवकूफ बनाया। यात्रा के दौरान इस तरह की घटना उनके साथ पहली बार हुई थी। जब किसी स्थानीय व्यक्ति ने उन्हें इस तरीके से ठगा हो। लेखिका इसे अपनी सामान्य हार मानती है। वह खुश है कि, कहीं उन्होंने उसे कैमरा बैग नहीं दी, और सोचती है कि, कैमरा बैग दी होती तो हजारों रुपए का नुकसान होता।

जितना समय अब्दुल साथ में रहा, वह लेखिका को अलग-अलग प्रकार से मनाने की कोशिश करने लगा। कभी उनका 'कैमरा बैग' उठाता, कभी उन्हें 'डिस्को' चलने का आग्रह करता, कभी अपने घर 'कस्बा' पर चलकर 'पश्चिम' का संगीत सुनाने का आग्रह करता, कभी कहता कि चलिए आपको पर्वत पर घूमने ले चलता हूं। फिर कभी कहता कि चलिए टैक्सी कर लेते हैं, लेखिका कहती है, टैक्सी की जरूरत नहीं है, बस में भी जा सकते हैं। तब कहता है कि, बस तो रुक रुक कर जाती है, टैक्सी एक ही बार में सीधा ले जाएगी। इन सभी अनुभवों की वजह से प्रीति सेनगुप्ता अब्दुल को संशय की दृष्टि से देखती है।

लेखिका इस प्रसंग का वर्णन इस तरह से करती है- "में अेने सो हिरहाम आप्या (लगभग सो रूपीया) अे गाड़ी भाड़े ठरावीने लाववानो हतो। बीजी ज पड़े सजागता पाछी आवी, ने मने मारी भूल समजाई, के पैसा मड्या पछी अे पाछा आववनो न हतो। आ वक्रता। खरेखर थाक्यो हतो तो अे, कारण के में अेने मचक नहोती आपी। जो अे पड़ पण अे ज रीते पसार थई गई होत तो अे खाली हाथे ज मारी विदाय लेवानो हतो। में बहु ओछा पैसा गुमाव्या हता, अेनो घणो वखत मारी पाछड़ बगड़यो हतो, मारी हार बहु ज सामान्य हती। नबड़ाई बतावी होत ने केमेरा-बेग आपी होत अेने ऊंचकवा तो हजारो रूपियानुं नुकसान थयुं होत। पण आवी रीते छेतरावानो आ पहेलो ज प्रसंग, तेथी मन कडवुं थई गयुं। दिवसो सुधी अे स्वाद रह्यो। सद्भाग्ये मोरोक्कोना बाकीना दिवसो सरस ज गया।"[33] इस तरह हम देखते हैं कि समग्र दुनियां में असामाजिक तत्व विध्यमान है, जो विदेशी यात्रियों को भिन्न-भिन्न तरीकों से परेशान करने का कार्य करते हैं। इस तरह के वाक्या हमे वर्तमान समय में भी जगह-जगह देखने व सुनने मिलते हैं।

इसके विपरीत, प्रीति सेनगुप्ता को मोरक्को में एक परिवार के साथ शानदार अनुभव भी होता है। 'अझीझ' नामक पात्र प्रीति सेनगुप्ता को अपने घर आने का निमंत्रण देता है। लेखिका घर जाने से पहले पूछती है, आपके गांव में रुकने के लिए कोई होटल है ? अजीज के हाँ कहने पर लेखिका उसके घर आने के निमंत्रण को स्वीकार करती है। उसके घर जाने के बाद लेखिका को दो-तीन दिनों तक वहां पर अत्यंत सुखद अनुभव होते हैं। अझीझ के परिवार में उसकी दो बहन, उसके भाई, बहन के बच्चे, सबके साथ लेखिका वहां पर दो दिन व्यतीत करती है। यह अत्यधिक रमणीय अनुभव था। जाते समय वहां के स्थानीय लोग लेखिका से कहते हैं कि, इसे अपना ही घर समझिए और अगली बार आते समय अपने साथ पति को भी लेकर आइए। हम सब साथ में फिर से कहीं घूमने चलेंगे। इस तरीके के संतोषजनक अनुभव से लेखिका का मन प्रसन्न हो उठता है। मोरक्को की एक प्राचीन कहावत है। उसका वर्णन लेखिका यहां पर करती है- "तमे ज्यारे अमारे घेर आवो त्यारे अमे तमारा महेमान बनीअे छीअे, कारण के आ घर तमारुं छे। आनी यथार्थता हूं जीवी शकी। कटु अनुभवथी क्यांये अधिक थयां मोरोक्कनोनी मानवतानां दर्शन।"[34] मोरक्को की यह परंपरा जहाँ मेज़बान स्वयं को अतिथि के सामने 'अतिथि घोषित करता है और अपने घर को अतिथि का घर मानता है। यह प्रथा शिष्टाचार, आत्मीयता, उदारता और अतिथि-सत्कार की गहरी भावना का प्रतीक है।

मोरक्को एक इस्लामिक देश है, और इस्लाम धर्म में मेहमाननवाज़ी को अत्यंत पुण्य का कार्य माना गया है। कुरान और हदीस में यह बताया गया है कि, अतिथि की सेवा करना ईश्वर की सेवा के समान है। यही

कारण है कि मोरक्को के समाज में अतिथि को 'अल्लाह का मेहमान' समझा जाता है, और उसका स्वागत पूर्ण समर्पण और आत्मीयता से किया जाता है। मोरोक्को के समाज में मान्यता है की, जब कोई मेहमान उनके घर आता है, तब मोरक्कन लोग यह कहकर कि 'यह घर अब तुम्हारा है', स्वामित्व का भाव मेहमान को सौंप देते है। इससे अतिथि को अपनापन और सुरक्षा का अनुभव होता है, और उसे ऐसा महसूस होता है कि, उसकी उपस्थिति बोझ नहीं है। इस तरह के सम्मान के पीछे एक गहरा सामाजिक संदेश छिपा है, मोरोककन लोगों को लगता है की, घर ईंट-पत्थर का नहीं, दिल का होता है। जब तक अतिथि घर में है, वह उस दिल का हिस्सा बन जाता है। यह विचारधारा सामाजिक बंधनों को मजबूत करती है, और विश्वास, स्नेह और सामूहिकता को बढ़ावा देती है। मोरक्को की यह परंपरा सामाजिक उदारता और मानवीय आत्मीयता का सुंदर उदाहरण है। यह सिखाती है कि, जब हम अतिथि का स्वागत आत्मा से करते है, तब वह घर नहीं वरन दिल का दरवाज़ा के समान प्रतीत होता है। दुनिया आज एकजुट है, तो इसके पीछे कारण है ये मोरोककन सभ्यता, यहां की परंपरा, ऐसी प्रथा से मानवता जीवित रहती है।

इस प्रकार से माला वर्मा व प्रीति सेनगुप्ता के यात्रा साहित्य में पात्र व चरित्रांकन का विवरण विस्तार से प्राप्त होता है। पात्रों के चयन व चरित्रांकन में आलोच्य लेखिकाओं का दृष्टिकोण भिन्न-भिन्न है।

5.5 परिवेशांकन : साहित्य में परिवेशांकन के माध्यम से किसी स्थान, परिदृश्य को प्रस्तुत किया जाता है। यह परिवेश, रचना के पात्रों और विषय के अनुरूप होता है, जिससे साहित्य का उद्देश्य अधिक स्पष्ट हो पाता है। परिवेशांकन से रचना में सच्चाई और विश्वसनीयता जुड़ती है। यात्रा-साहित्य में जिस स्थान की यात्रा की जाती है, उस स्थान के वातावरण, लोग, रीति-रिवाज़ों और प्राकृतिक दृश्यों का वर्णन करना बहुत आवश्यक होता है। यह वर्णन पाठकों को उस स्थान से जोड़ता है और उन्हें ऐसा अनुभव होता है जैसे वे स्वयं उस स्थल पर उपस्थित हों। 'डॉ.अवधेश कुमार' के अनुसार "यात्रा साहित्य में लेखक के व्यक्तित्व, पात्रों, भाषा-शैली और उद्देश्य का तो महत्त्व है ही, लेकिन सबसे अधिक महत्वपूर्ण परिवेशांकन होता है। यही यात्रा साहित्य का आधारभूत तत्व है।"[35] इस तरह परिवेश का सजीव चित्रण यात्रा साहित्य का एक आवश्यक और प्रभावशाली तत्व है। परिवेशांकन से साहित्य में प्रामाणिकता का समावेश होता है।

माला वर्मा अपने 'अमेरिका में कुछ दिन' प्रवास में लिखती है कि- "चालीस-पचास वर्ष पूर्व अमेरिका जितना अनाज उपजाता था। आज उससे कई गुना अधिक अनाज पैदा करता है। अमेरिकी सरकार करोड़ों-अरबों रुपये कृषि के नाम औजार, उन्नत बीज, ट्रैक्टर आदि खरीदने पर खर्च कर देती है। वहीं

हमारे देश में प्रतिवर्ष जाने कितने कृषक गरीबी, भूख व कर्ज में डूबे होने की वजह से आत्महत्या कर लेते हैं। शायद ही कोई ऐसा दिन गुजरता हो जब अखबारों में ऐसी खबर न छपे । सरकार की तरफ से प्रतिवर्ष तरह-तरह के लुभावने प्रस्ताव कृषि व कृषकों के लिए रखे जाते हैं पर ईश्वर जाने इन प्रस्तावों का भविष्य में क्या होता है। भारत के कृषक कहने से एक ही छवि मन में उभरती है और वह है-गरीब लाचार बेबस । दूसरों का पेट भरने वाला खुद अधपेट भूखा सोता है।"[36] प्रस्तुत प्रसंग के जरिए माला वर्मा भारत और अमेरिका की कृषि व्यवस्था के बीच गहरे विरोधाभास को उजागर करती हैं। एक ओर अमेरिका में सरकार कृषि के लिए अत्याधुनिक तकनीक, औजार, उन्नत बीज, ट्रैक्टर और वैज्ञानिक साधनों पर अरबों रुपये खर्च करती है, जिससे वहां का किसान संपन्न और सक्षम बन रहा है। इसके विपरीत, भारत में आज भी करोड़ों किसान अत्यंत गरीबी, भुखमरी और कर्ज में डूबे हुए हैं। माला वर्मा इस दुखद सच्चाई की ओर ध्यान आकर्षित करती हैं कि, हमारे देश में शायद ही कोई दिन ऐसा जाता हो जब किसी किसान की आत्महत्या की खबर अखबार में न आती हो। यह संकेत करता है कि, भारत की कृषि व्यवस्था और किसानों की स्थिति कितनी चिंताजनक है। माला जी सरकार की नीतियों और योजनाओं पर भी प्रश्नचिह्न लगाती हैं। वह कहती हैं कि, भले ही सरकार हर वर्ष किसानों के लिए कई आकर्षक योजनाएं और वादे घोषित करती है, लेकिन उनका धरातल पर कितना प्रभाव होता है, यह संदेह के घेरे में है। योजनाएं बनती हैं, परंतु उनका लाभ कितने किसानों तक पहुँचता है, यह स्पष्ट नहीं होता। अंतः माला वर्मा महसूस करती है की, भारत को अपनी कृषि नीतियों में वास्तविक सुधार लाने की आवश्यकता है। किसानों को केवल आश्वासन नहीं, परंतु ठोस सहायता, तकनीकी संसाधन, और आर्थिक सुरक्षा प्रदान करनी चाहिए, ताकि वे आत्मनिर्भर और सम्मानजनक जीवन जी सकें।

जापान का परिवेश दुनिया के देशों से अद्भुत हैं। दुनियां भर में आंदोलन करने के लिए आम जनता सड़कों पर उतरती है, तोड़ फोड़ करती है, सरकारी संपत्ति को नुकसान पहुचायां जाता हैं, लेकिन जापान के लोगों का विरोध करने का तरीका अलग है। माला वर्मा के अनुसार "यदि जापान में बस ड्राईवर हड़ताल पर हैं तो उनके हड़ताल करने का तरीका देखिए। न तो उन्होंने बस रुकने दी, न जापान बंद किया, अपना काम सही तरीके से करते है, बस यात्रियों से किराया नहीं लेते हैं जिससे यह नुकसान गैस और पेट्रोल कम्पनी और उनके डिपार्टमेंट को जाता है। है न कितना सभ्य तरीका?"[37] प्रस्तुत प्रसंग द्वारा जापान के आंदोलन या हड़ताल करने के अत्यंत सभ्य और अनुशासित तरीके का चित्रण होता है। भारत में आमतौर पर जब हम हड़ताल की बात करते हैं, तो हमारे सामने कामकाज रोक देने, यातायात ठप कर देने, सड़कों पर

प्रदर्शन करने, और कभी-कभी तो सार्वजनिक संपत्ति को नुकसान पहुँचाने की घटनाएँ आती हैं। परंतु जापान में बस ड्राइवरों की हड़ताल का तरीका इन सब से बिलकुल भिन्न है। इस प्रसंग से स्पष्ट होता हैं कि, विरोध प्रकट करने के शालीन, शांतिपूर्ण और जिम्मेदारीपूर्ण तरीके हो सकते हैं। हड़ताल का उद्देश्य समस्या की ओर ध्यान खींचना होता है, न कि आम नागरिकों को तकलीफ़ देना या सार्वजनिक जीवन को अस्त-व्यस्त करना। जापान के बस चालकों का यह तरीका उदाहरणस्वरूप प्रस्तुत किया गया है ताकि अन्य देशों, विशेषकर भारत जैसे देशों में भी लोग आंदोलन की गरिमा और सामाजिक ज़िम्मेदारी को समझ सकें। इस प्रसंग में एक गहरा संदेश छिपा है, यदि विरोध में संयम, नैतिकता और उद्देश्य के प्रति स्पष्टता हो, तो वह न केवल सफल होगा, बल्कि समाज में एक सकारात्मक प्रभाव भी छोड़ सकता है।

जापान के लोग दुनिया के अन्य देशों की तुलना में अपने देश से अधिक प्रेम करते है। इसलिए उनके प्रत्येक कार्य मे अनुसाशन तथा साफ सफाई का महत्व झलकता है। प्रीति सेनगुप्ता कहती है, "वातावरण साव सार्वजनिक अने अस्वाभाविक नथी लागतुं। जपाननी बधी जाहेर, जनसाधारण जग्याओ पण अेवी स्वच्छ होय छे के शरूआतमां तो अे तरफ ध्यान पण ना जाय। कचरापेटी मड़े नहीं त्यां सुधी हाथमां फेंकी देवानी चीजो लईने चालता लोको जोइअे त्यारे ज ख्याल आवे के आखो देश केटलो चोख्खो छे। केवा आनंद अने निरांतनी अे वात छे।"[38] जापान एक ऐसा देश है, जो तकनीकी प्रगति के साथ-साथ नैतिक अनुशासन और नागरिक कर्तव्यों में भी अग्रणी माना जाता है। प्रीति जी जब जापान की सार्वजनिक जगहों पर जाती हैं, तो वहाँ की स्वच्छता देखकर चकित रह जाती है। वह कहती है, सार्वजनिक स्थल होने के बावजूद वहाँ का वातावरण न तो अस्वाभाविक लगता है, न ही किसी तरह की गंदगी दिखाई देती है। साफ सफाई रखना, जापानी लोगों के मूल स्वभाव में है। इसका ज्वलंत उदाहरण हम देखते है, 'कतर' में आयोजित 'फीफा' फुटबॉल विश्व कप 2022 एक मैच के दौरान कुछ दर्शकों ने मैदान में पानी की 'बोतलें' फेंक दी थी, और खूब सारा कचरा किया था। ऐसी स्थिति में जापानी लोग जो मैच देखने आए थे। उन्होंने पूरा स्टेडियम साफ किया। पूरा मैदान साफ-सुथरा किया एवं जहां बैठने की व्यवस्था थी वहां पर जितनी भी बोतल फेकी गई थी, सारी उन्होंने उठाई। स्वच्छता केवल सफाईकर्मियों की जिम्मेदारी नहीं है, बल्कि यह हर नागरिक की आदतों से जुड़ा मूल्य है। यह घटना बताती है कि, जापानी लोग कितने आधुनिक एवं स्वच्छता के आदी है। जब एक यायावर किसी देश स्थल की यात्रा करता है तब उसके लिए सबसे महत्वपूर्ण उस देश का परिवेश ही अधिक होता है। वह किसी घटना को भूल सकता है लेकिन परिवेश को भुलाया नहीं जा सकता। स्वच्छता के प्रसंग पर 'गोविंद मिश्र' जर्मनी यात्रा का जिक्र करते हुए

कहते है- "एक खूबसूरत महिला बगल से गुजरी साफ-सुथरी पोशाक, स्कार्फ बांधे हुए। वह अपने साथ जहाज़ में कुछ हलचल ले आयी थी। उसका एक तरह से पीछा करते हुए मैं जहाज की पूंछ पर जा पहुंचा। एक बहुत ही खूब सूरत लड़की बाथरूम साफ कर रही थी। पेंट, कमीज़, घड़ी और ऊपर से डाली हुई यूनिफार्म। उसके हाथ बहुत तेज़ी से चल रहे थे, इधर-उधर देखने की फुर्सत ही नहीं, फटाफट बाथरूम साफ करके उतर गयी. नीचे और कर्म-चारियों के साथ एक वैन में-वहां बैठे हुए मैंने उन्हें देखा । वे साफ-सुथरे, गोरे और मेहनती लोग थे- जर्मन लोग। हिटलर को अगर इस देश की कौम के बारे में मुगालता था तो ग़लत नहीं था।"[39] साफ-सफाई इतना अधिक महत्व कोई देश दे रहा है तो वो देश वाकई कैसा होगा। कल्पना से परे है। भारत में इस तरह की व्यवस्था शुरू करने के लिए प्रारंभिक स्तर पर सफाई कर्मचारीयों को प्रशिक्षण देना होगा। तब जाकर ऐसी सुंदर स्थिति का निर्माण हो सकता है, अन्यथा कितने ही स्वच्छता अभियान चला ले, कितनी बड़ी-बड़ी बाते कर ले, स्थिति में कोई सुधार होने की संभावना दिखाई नहीं देती। प्रत्येक नागरिक को इसका जिम्मा लेना होगा तब जाकर हम भारत की तुलना जापान से जर्मनी से कर पाएंगे।

प्रीति सेनगुप्ता जापान के 'गांवो' में जाती है। वहां के गांव से लेखिका बहुत प्रभावित होती है। उनका वर्णन इस प्रकार से करती है- "जापानीझ लोकोने में ऋजु कलारुचीवाड़ा तेम ज भौतिक वस्तुओ तरफ संयमवाड़ा धारेला। अल्पतम चीजवस्तुओवाडुं अेक घर में जपानमां जोयु। अलबत्त, टेलीविजन अने टेलीफोन तो हता ज। श्री अने श्रीमती ओसुकी खेडुत हता। अने पोताना खेतरोमां खेती करीने गुजरान चलावतां। अेमने मने उमडकाथी आवकारी। जमवानुं सादु, स्वादिष्ट अने पुरतुं हतुं। पोतानी रीते, पोतानी जेम अेमने मने राखी। ओछी आधुनिकता होवाने लीधे अेमना के कझुओना वर्तनमां कोई संकोच के माफीनो भाव न हतो। फूं तोन कहेवाती आरामदायक गादी पर ऊंघ पण सरस आवी। वहेली सवारथी कार्यारंभ थई जतो, पण अवाज फक्त गयोना भांभरवानो अने पंखीओना किलकिलाटनो। सर्वत्र स्थानोनुरूप ग्रामीण शांति।"[40] प्रस्तुत प्रसंग के आधार पर लेखिका ने पाया कि जापानी लोग कलात्मक दृष्टि से प्रवृत्त होते हैं, तथा भौतिक चीजों के प्रति संयमित होते हैं। प्रीति जी कहती है, मैंने जापान में एक घर देखा जिसमें बहुत कम साज-सज्जा थी। बेशक, वहां टेलीविजन और टेलीफोन भी थे। श्रीमान और श्रीमती 'ओसुकी' किसान थे। और वे अपने खेतों में खेती करके अपना जीवनयापन करते थे। उन्होंने मेरा गर्मजोशी से स्वागत किया। भोजन सादा, स्वादिष्ट और पर्याप्त था। उन्होंने मुझे अपने तरीके से, अपने जैसा ही रखा। आधुनिकता की कमी के कारण, उनके या 'काझुओ' के व्यवहार में शर्म या माफी का कोई भाव

नहीं था। 'फु तोन' नामक आरामदायक गद्दे पर सोना भी अच्छा लग रहा था। यहां पर काम सुबह-सुबह शुरू हो जाता था, लेकिन केवल गायों की आवाज और पक्षियों की चहचहाहट ही सुनाई देती थी। अंत मे लेखिका कहती है, जापान के ग्रामीण जगह का स्वरूप शांति भरा है। पूरी दुनिया में गांवों का रूप एक जैसा ही है, गांवों में संस्कृति है, गांवों में मानवता है, गांवों में प्रेम है, गांवों में करूना है, गांवों में निस्वार्थ भाव है। इन कारणों के वजह से दुनिया में ज़्यादातर लोगों को गांवों में जाना वहाँ रहना पसंद है।

जापान में जीवनयापन की लागत अपेक्षाकृत अधिक है, जैसे भोजन, होटल का किराया, टैक्सी सेवा और रेलगाड़ियों के टिकट, लेकिन इसके बावजूद वहाँ के निवासी इस बात की शिकायत नहीं करते है। यह व्यवहार जापानियों के संतोषभाव को दर्शाता है। प्रीति जी इन संदर्भ का विवरण इस तरह प्रस्तुत करती है, "जपाननुं जीवनधोरण उंचुं गणाय छे, जो के कोई जापानीझने मोंघवारीनी फ़रियाद करता नथी सांभड्या। खावा-पीवानुं, होटलना रूमोनुं भाडुं खास्सुं मोंघुं होय छे। टैक्सी पण आपणने मोंघी लागे, ने लांबा अंतरे जती के झड़पे जती के केटलीक खास आगगाड़ीओनी टिकिट पण किंमती लागे।"[41] प्रीति जी जब जापान की तुलना अन्य देशों से करती हैं, तो उन्हें वहाँ की सेवाओं की कीमतें अधिक लगती है। किंतु वहीं दूसरी ओर, जापानी लोग इस महँगाई को सहज रूप से स्वीकार करते है। उसका विरोध नहीं करते। इसका कारण है कि, जापान का समाज गुणवत्ता, सेवा और शुद्धता को प्राथमिकता देता है। वहाँ जो सेवाएँ महँगी हैं, वे उतनी ही उच्च स्तरीय भी होती है। जापानी नागरिक समझते हैं कि, बेहतर सेवा के लिए अधिक मूल्य चुकाना स्वाभाविक है, और इस सोच के चलते वे इसे बोझ नहीं, योग्य मूल्य का आदान-प्रदान मानते हैं।

जापान में चोरी-डकैती, लूटपाट जैसी घटनाएं नहीं होती है। जापान में यात्रा करना एक सुरक्षित अनुभव है। जापान दुनिया के अन्य देशों से काफी अधिक सुरक्षित है। प्रीति सेनगुप्ता अपने अनुभव से पाठकों को अवगत कराती है। "जपानमां फरता हमेशा सर्वोपरि भाव होय आनंदनों सुखनों, कोई मुश्केली ज नहीं, कशां विघ्न ज नहीं। छेत्ररावा, लूटावा, हेरान थवानी कोई चिंता ज नहीं।"[42] लेखिका कहती हैं, जापान में यात्रा करते समय उन्हें न तो किसी प्रकार की चोरी का भय था। न ही उन्हें छेड़छाड़ का डर था। जापान यात्रा में प्रीति जी को किसी भी मुसीबत का सामना नहीं करना पड़ा। इससे स्पष्ट होता है कि, जापानी समाज बहुत ही अनुशासित, ईमानदार और सुरक्षित है। वहाँ के लोग नियमों का पालन करते हैं, दूसरों की स्वतंत्रता और अधिकारों का सम्मान करते हैं, और सार्वजनिक स्थलों पर शांति और स्वच्छता बनाए रखते हैं। यह अनुभव प्रीति सेनगुप्ता के लिए इसलिए भी विशेष है, क्योंकि दूसरे देशों में, विशेषकर

पर्यटकों के लिए, इन समस्याओं का सामना करना आम बात है। परंतु जापान में प्रीति जी निर्भयता और स्वतंत्रता से घूम सकीं। जिससे उन्हें बहुत अधिक हर्ष और आत्मिक सुकून की अनुभूति हुई।

'चीन' के 'शंघाई' शहर में स्कूलों द्वारा दिया जाने वाला प्राथमिक शिक्षण, वहां के छोटे बच्चों के लिए कितना लाभकारी तथा आधुनिक है, इसका वर्णन प्रीति सेनगुप्ता इस तरह से करती है "दरेक शहेरमां बाड़कोनो महेल (children's place) कहेवाता स्थडो होय छे। सादा शब्दोंमां अेने शाडा कही शकाय। त्या वाराफरती अठवाड़ियाना जुदा जुदा दिवसे, वहेचणी प्रमाणे अे विस्तारनां बाड़को पोतपोतना शोख प्रमाने समय वितावे छे। चित्र,नृत्य,संगीत,जादुना खेल, लेखांकन, रमतगमत, विज्ञान, इंजनेरी, सुथारकाम, वगेरे अनेक प्रवृत्तिओ शिखवाडाय छे। जे बाड़क पोतना शोखनी प्रवृत्तिमां निपुणता बतावे छे तेने वधारे शिक्षण माटे बीजा ऊंचा केंद्रोंमां मोकलवामां आवे छे।"[43] चीन में अभिभावकों द्वारा बचपन से बालक की रुचि पर ध्यान दिया जाता है। बालक के पसंदीदा क्षेत्र में उसे बाल्यावस्था से ही तालीम के लिए दाखिल करा दिया जाता है। इस तरह हम कह सकते है की, अत्याधुनिक तरीके की शिक्षा के कारण ही आज चीन पूरी दुनिया में तेजी से आगे बढ़ रहा है। संसार का कोई भी क्षेत्र हो, आज चीनी हर जगह सबसे आगे है। 'ओलंपिक' खेलों की जब हम बात करते है, तब ऐशिया महाद्वीप में सबसे अधिक स्वर्ण पदक जितना और विश्व के देशों में दूसरे पायदान पर रहना कोई सरल बात नहीं है। ओलंपिक खेलों मे क्यों चीन इतना आगे है ? तो इसका कारण मुझे इनकी प्राथमिक शिक्षण पद्दती लगती है।

विश्व भर से लोग 'थाईलैंड' विलासिता की तृप्ति के लिए जाते है। ये बात जग जाहीर है। इस पर प्रीति सेनगुप्ता ने अपने विचार व्यक्त कीए है– "गरीब देश अने तेना गरीब लोकोने माटे कोई पण रीते थती आवक ज वधारे महत्त्वनी होय छे- नैतिक के स्वास्थ्यनां मूल्यों नहीं।"[44] प्रस्तुत प्रसंग में लेखिका थाईलैंड की उस वास्तविकता को उजागर करती हैं, जो अक्सर पर्यटन और विलासिता की चकाचौंध में छिपी रह जाती है। थाईलैंड दुनियाभर में एक ऐसा देश माना जाता है, जहाँ लोग मौज-मस्ती, विश्राम और शारीरिक विलास के लिए जाते हैं। लेकिन प्रीति सेनगुप्ता इस परिवेश के पीछे की सामाजिक और आर्थिक सच्चाई को सामने लाती हैं। प्रीति जी बताती है की, थाईलैंड एक गरीब देश है, और वहाँ के लोग आर्थिक रूप से कमजोर है। इसलिए वे किसी भी तरह की आय को महत्त्व देते हैं, चाहे वह नैतिक मूल्यों के विरुद्ध ही क्यों न हो। लेखिका संकेत करती हैं कि, देश की आर्थिक असमानता और बेरोजगारी ने वहाँ के नागरिकों को इस स्थिति में ला खड़ा किया है। थाईलैंड के लोग स्वास्थ्य, नैतिकता और सामाजिक गरिमा को दरकिनार कर सिर्फ आमदनी की ओर भागते है। जब मूलभूत ज़रूरतें पूरी नहीं होतीं, तब नैतिकता एक

विलास बन जाती है, जिसे लोग चुन नहीं पाते। यहाँ लेखिका का दृष्टिकोण न्यायपूर्ण और करुणामय है। वह थाईलैंड के लोगों को दोष नहीं देती है, न ही उस व्यवस्था को पूरी तरह से नकारती है। वह अपने विचारों के विरोधाभास को पाठकों के समक्ष रखती है।

'फ्रांस' देश की यात्रा के दौरान, प्रीति सेनगुप्ता देखती है की, वर्तमान समय मे गांव बचे हुए है, ओर वहां के गांव आधुनिक है, लेखिका के अनुसार "हजी फ्रांसमां गामड़ां छे, अने शांत, सुंदर नेसर्गिक विस्तारो पण छे, परंतु क्यांक लोको गामडिया जेवा नथी रह्या.. बधे ज आधुनिकतानो स्पर्श थई गयो छे। ऊंची कक्षानी जीवन-रीति पर सभान भार छे। 'श्रेय जीवन वियोग' नी पण स्थापना थई छे।"[45] इस प्रसंग में प्रीति सेनगुप्ता फ्रांस के गाँवों और वहाँ के 'जीवनशैली' की बदलती तस्वीर को उजागर किया है। लेखिका बताती हैं कि, हालाँकि फ्रांस में अभी भी शांत, सुंदर और प्राकृतिक विस्तार वाले गाँव मौजूद हैं, फिर भी वहाँ की जीवनशैली अब पारंपरिक या ग्रामीण नहीं रही। वहाँ के लोग अब 'गामडिया जेवा' अर्थात सरल, सादगीपूर्ण, ग्रामीण ढंग से नहीं जीते, बल्कि उनकी जीवनशैली पर अब आधुनिकता का प्रभाव पूरी तरह छा गया है। लेखिका कहती है, समय के साथ-साथ गाँव और शहर के बीच की भौगोलिक व सांस्कृतिक दूरी अब बहुत कम हो गई है। हर व्यक्ति जो गाँव में रहता हो या शहर में अब आधुनिक जीवन के संपर्क में आ चुका है। ये परिवर्तन स्पष्ट करता हैं कि, अब गाँवों में भी ऊँची कक्षा की जीवन-रीति, यानी भौतिक सुख-सुविधाओं, व्यक्तिगत स्वतंत्रता, और आधुनिक संसाधनों का बोलबाला है। आधुनिकता के साथ जो बदलाव आए हैं, वे केवल जीवन के भौतिक पहलुओं तक सीमित नहीं हैं, परंतु इससे सामाजिक और भावनात्मक संबंधों पर भी गहरा प्रभाव पड़ा है। लोग अब पहले से अधिक स्वतंत्र, आत्मकेंद्रित और निजी सुख-सुविधा पर केंद्रित हो गए हैं। वे सामूहिकता और पारिवारिक बंधनों की तुलना में व्यक्तिगत सफलता और स्वतंत्रता को प्राथमिकता देने लगे हैं। मुख्य रूप से इस प्रसंग के द्वारा प्रीति जी यह बताना चाहती हैं, फ्रांस जैसे देश में, जहाँ गाँवों की शांति और प्रकृति अभी भी बची है, वहाँ भी आधुनिकता ने जीवनशैली, सोच और सामाजिक संबंधों को बदल कर रख दिया है। यह सांस्कृतिक परिवर्तन है, जहाँ सादगी से विलासिता की ओर तथा सामूहिकता से व्यक्तिगतता की ओर समाज आगे बढ़ रहा है। समाज में हो रहे इस परिवर्तन से एक ओर विकास तो नजर आता है, वहीं दूसरी ओर मानवीय मूल्यों का विच्छेद और अलग-थलग हो रहे परिवारों का दुख भी नजर आता है।

आगे प्रीति सेनगुप्ता 'स्पेन' का परिवेश एवं वहां के युवाओं का वर्णन करती है- "गरीबी, फुगावों, बेकारी ने आना परिणाम रुपे वधता जता गुनाओ, चोरीओ, बुरी लतो, तेमज साम्यवादीओथी कराता हुमलाओने

कारणे स्पेईननी हालत डामाडोढ छे। वास्तविकता आ छे, अने लाक्षणिक 'फ्लेमेन्को' नृत्य, सांढमारी, सांजथी रात सुधी काफेमां बेसी रहेवुं, धर्मोत्सवो, वगेरे जुदा जुदा उपायोथी प्रजा चित्तरंजन करती रहे छे।"[46] स्पेन वर्तमान में गरीबी, महंगाई, और बेरोजगारी जैसी गंभीर समस्याओं से जूझ रहा है। इन विषम परिस्थितियों के कारण समाज में अपराध, चोरी, नशे की लत और राजनीतिक हिंसा जैसे नकारात्मक प्रवृत्तियाँ तेजी से बढ़ रही हैं। खासकर युवाओं में दिशाहीनता और असुरक्षा की भावना देखी जा सकती है। प्रीति जी कहती है, समस्याओं से राहत पाने का मार्ग परंपरा और मनोरंजन बन गया है। यह प्रसंग स्पेन के युवाओं की संघर्षमयी स्थिति और पूरे समाज की मानसिकता का चित्रण स्पष्ट करता है।

अकेली स्त्री के लिए मोरक्को घूमना कितना कठिन हो सकता है, प्रीति सेनगुप्ता के प्रस्तुत प्रसंग से समझ सकते हैं- "मोरोक्कोमां फरवुं कठिन अवश्य हतुं। प्रत्येक युवाननी आँख निर्दोष मुसाफरने छेतरवा तरफ, लुंटवा तरफ, मित्रता बतावे, मीठुं मीठुं बोले, पण आशय खिस्सुं कातरवानो, केमेरा चोरवानो, मफ़त भोजन पामवानो। शंकाशील स्वभाव नहीं, तेथी सतत सजाग रहेवामा अने दरेक क्षणे दरेक जनथी सावधान रहेवामां थाक लागी जाय। वडी, मुस्लिम देश, स्त्रीओ अेकली फरे ज नहीं। पोषके पाश्चात्य लागे, पण आचार तो स्थानानुरुप ज होय ने।"[47] दिए गए वर्णन के आधार पर, प्रीति जी कहती है, मोरक्को में अधिकतर युवाओं की नज़र पर्यटकों पर इस प्रकार होती है, जैसे वे कोई शिकार हों। वे पर्यटकों के साथ मीठी-मीठी बातें करते हैं, दोस्ती का दिखावा करते हैं, परंतु उनके अंतर्निहित उद्देश्य होते हैं, जैसे कि कैमरा चुराना, मुफ्त भोजन प्राप्त करना या पैसे ऐंठना। इस प्रकार का वातावरण एक विदेशी पर्यटक के लिए असुरक्षा का भाव उत्पन्न करता है। आर्थिक रूप से गरीब देश होने के कारण वहां इस तरीके का आचरण देखने को मिलता है।

माला वर्मा और प्रीति सेनगुप्ता ने अपनी प्रस्तुत यात्राओं के दौरान परिवेश का रेखांकन बहुत ही बारीकी के साथ साथ किया है। बिना परिवेश वर्णन के किसी भी यात्रा के एवं वहां की महत्वपूर्ण तथ्य को उजागर करना संभव नहीं हो सकता है। यात्राओं में परिवेश का महत्व अत्यधिक होता है, यह यात्रा प्रसंग को रोचक बनाने में सहायक सिद्ध होता है। माला वर्मा और प्रीति सेनगुप्ता का यात्रा साहित्य इस दृष्टि से बेजोड़ है।

5.6 इतिहास बोध : यात्रा के दौरान लेखक का अतीत के प्रति सजग दृष्टिकोण और ऐतिहासिक तथ्यों की प्रस्तुति करना ही 'इतिहास बोध' कहलाता है। जब कोई लेखक किसी ऐतिहासिक स्थल की यात्रा करता है, तो वह उस स्थल से जुड़ी ऐतिहासिक घटनाओं, युद्धों, राजवंशों, सांस्कृतिक उत्थान-पतन और

वहाँ की स्मृतियों को अपने अनुभवों में शामिल करता है। उदाहरणस्वरूप देखे तो यदि कोई लेखक काशी या पाटलिपुत्र की यात्रा करता है, तो वह महात्मा बुद्ध, सम्राट अशोक, गुप्त काल या मुग़ल काल की छवियों का वर्णन अवश्य करता है। इस प्रकार यात्रावृत्तांत ऐतिहासिक ज्ञान का स्रोत बन जाता है। इतिहास बोध यात्रा साहित्य को केवल यात्रा का विवरण न रखकर एक कालखंड का दर्पण बना देता है। इससे पाठक को यह अनुभव होता है कि वह भी उस काल में उपस्थित है। इतिहास बोध के माध्यम से लेखक अतीत और वर्तमान के बीच संवाद स्थापित करता है। यह केवल शुष्क तथ्यों की पुनरावृत्ति नहीं होती, बल्कि जीवंत प्रसंगों, स्मारकों के वर्णन और स्थानीय जनश्रुतियों के माध्यम से इतिहास को पुनर्जीवित किया जाता है।

वर्तमान में माला वर्मा और प्रीति सेनगुप्ता जैसे यात्रा लेखिकाओं ने इतिहास बोध को यात्रा लेखन का एक अनिवार्य अंग बना दिया है। उनकी 'जापान यात्रा' में ऐतिहासिक बोध अत्यंत गहराई से प्रकट होता है। अतः कहा जा सकता है कि यात्रा साहित्य में इतिहास बोध केवल ज्ञानवर्धक नहीं है, अपितु यह पाठक की चेतना को भी समृद्ध करता है। यह वर्तमान को अतीत से जोड़कर एक व्यापक दृष्टिकोण प्रदान करता है, जो साहित्यिक और बौद्धिक दोनों दृष्टियों से अत्यंत मूल्यवान है। यात्राओं के दौरान अनेक देशों की ऐतिहासिक घटनाएं, किसी देश की संघर्ष गाथा, विश्व भर में हुई वर्चस्व की लड़ाईयों का उल्लेख यथा स्थान आलोच्य लेखिकाओं ने किया है। इनके यात्रा साहित्य में इतिहास कोई कल्प कथा की तरह नहीं बल्कि ऐतिहासिक सत्य की तरह उपस्थित है। आलोच्य लेखिकाओं के यात्राओं में ऐतिहासिक पहलुओं का विश्लेषण देखने को मिलता है। माला वर्मा और प्रीति सेनगुप्ता के यात्रा साहित्य में वर्णित इतिहास बोध इस प्रकार है-

ऐतिहासिक पक्ष का उल्लेख करते हुए माला वर्मा कहती है कि "अंग्रजों में उनका स्वदेश-प्रेम सबसे बड़ा गुण रहा है, अन्य देशों के प्रति जहाँ उन्होंने अवसरवादिता एवं बेईमानी की नीति अपनाई, वहीं अपने देश के प्रति सदैव वफादारी एवं त्याग की भावना रखी। ब्रिटिश चाहे स्कॉट हो या इंगलिश, रोमन कैथोलिक हो या प्रोटेस्टेंट, वे कभी हमारी तरह भाषा, प्रदेश या धर्म के कारण नहीं बिखरे। हमारा भारत आज से कई सौ वर्षों पूर्व भी जिन कारणों को लेकर लड़ता रहा था, आज भी उन्हीं कारणों में उलझा हुआ, मार-काट मचा रहा है। इतिहास में दर्ज भूलों से कोई भारतीय शिक्षा नहीं लेता। कहने मात्र को हम स्वतंत्र हैं, हम आज भी अपनी दोरंगी नीतियों के कारण परतंत्र ही हैं। ब्रिटेन ने अपनी एकता को सम्भाले रखा, जिस कारण से विश्व में प्रजातंत्र की व्यवस्था यहाँ सबसे अधिक सफल रही। ब्रिटिश संसद के प्रति इनकी श्रद्धा

एवं अनुशासन का उदाहरण अन्य देशों में दिया जाता है। और हमारे भारत के संसद भवन में क्या होता है ? अनुशासन की बात तो जाने दीजिए, यहाँ माईक, टेबुल, कुर्सियाँ तक एक दूसरे पर फेंक कर मारी जाती है। भविष्य में पिस्तौल-बम आदि भी यदि चलने लगें तो आश्चर्य नहीं होना चाहिए। और ये सब चोरी-छिपे तो होता नहीं। इसे विधिवत् टेलीविजन से सीधा दिखाया जाता है, ताकि जनता यह समझ सके कि उनके बहुमूल्य वोटों से चुनकर ऊपर पहुँचे लोग किस चरित्र के व्यक्ति हैं।"[48] माला वर्मा प्रस्तुत प्रसंग में भारत एवं ब्रिटेन की तुलना करते हुए कहती है की, ब्रिटिश लोग चाहे किसी भी क्षेत्र या धर्म के हों, स्कॉटिश, इंग्लिश, कैथोलिक या प्रोटेस्टेंट वे भाषा, धर्म या क्षेत्रीयता के आधार पर आपस में नहीं बंटे। इसके विपरीत भारत सैकड़ों वर्षों से इन्हीं कारणों से लड़ता आया है और आज भी इन झगड़ों से बाहर नहीं निकल पाया है।

आगे माला जी कहती हैं कि, भारतीय इतिहास से लोग कोई सबक नहीं लेते। आज़ादी मिलने के बावजूद भारत आज भी दोहरी नीतियों, असहमति, और आंतरिक कलह से जूझ रहा है। लेखिका भारत की तुलना ब्रिटेन से करते हुए बताती हैं कि, ब्रिटेन ने अपनी राष्ट्रीय एकता और लोकतंत्र को सशक्त बनाए रखा, जिससे वहाँ की संसदीय प्रणाली विश्व में एक आदर्श व्यवस्था के रूप में स्थापित हुई। ब्रिटिश संसद में अनुशासन और परंपरा को सर्वोच्च माना जाता है। इसके विपरीत, भारतीय संसद की स्थिति बहुत ही दयनीय दिखाई देती है। यहाँ न तो अनुशासन है, न ही मर्यादा। संसद के भीतर ही माइक्रोफोन, टेबल और कुर्सियाँ फेंकी जाती हैं, और यह सब टेलीविज़न पर जनता के सामने प्रसारित किया जाता है। माला जी तंज कसते हुए कहती हैं, यदि भविष्य में संसद में पिस्तौल और बम भी चलने लगें, तो आश्चर्य नहीं होना चाहिए। लेखिका भारतीय व्यवस्था से हताश है। अंततः माला जी यह स्पष्ट करना चाहती हैं कि, भारत के नेताओं और नागरिकों में एकता, अनुशासन, देशभक्ति और जिम्मेदारी की भारी कमी है। स्वतंत्रता केवल राजनीतिक रूप में है, जबकि मानसिक और सामाजिक दृष्टि से हम अब भी परतंत्र हैं। भारत को सही मायनों में प्रगति करनी है, तो उसे इतिहास से सीख लेकर आत्मनिरीक्षण करना होगा, और राष्ट्रहित को सर्वोपरि मानना होगा। तभी यहां कुछ परिवर्तन संभव होगा, अन्यथा सब जस का तस ही रहेगा।

अमेरिका वियतनाम युद्ध का वर्णन माला जी इस तरह करती हैं- "वियतनाम वार यू.एस.ए. द्वारा लड़ा जाना वाला सबसे लम्बा युद्ध था जो सन् 1959 से लेकर सन् 1975 तक यानी 16 वर्ष चला। यह उस समय की पहली लड़ाई थी जिसमें यू.एस.ए. को शिकस्त खानी पड़ी थी। साउथ ईस्ट एशिया में कम्यूनिज्म (साम्यवाद) को रोकने के लिए अमेरिका को इस युद्ध में कूदना पड़ा।"[49] इस प्रसंग के माध्यम

से माला वर्मा अमेरिका- वियतनाम युद्ध की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि और उसके परिणामों पर प्रकाश डालती हैं। यह युद्ध अमेरिका के लिए सिर्फ समय और संसाधनों की बर्बादी नहीं था, बल्कि सामरिक दृष्टि से भी एक बड़ी हार के रूप में दर्ज हुआ। अमेरिका ने यह युद्ध दक्षिण-पूर्व एशिया में साम्यवाद (कम्युनिज्म) के प्रसार को रोकने के लिए शुरू किया था। उस समय वैश्विक राजनीति में अमेरिका और सोवियत संघ के बीच शीत युद्ध चल रहा था, जिसमें दोनों महाशक्तियाँ अपने-अपने विचारधारा के प्रभाव क्षेत्र को बढ़ाना चाहती थीं। अमेरिका यह नहीं चाहता था कि वियतनाम में कम्युनिस्ट सरकार का वर्चस्व हो, क्योंकि उसे डर था कि इससे अन्य एशियाई देशों में भी साम्यवाद फैल सकता है। अमेरिका के पास शक्ति और संसाधन होते हुए भी, वह इस युद्ध में स्थानीय जनता की भावना, वियतनामी संघर्षशीलता और गुरिल्ला युद्ध नीति के आगे हार गया। यह युद्ध अमेरिका की सैन्य नीति और राजनीतिक रणनीति की असफलता का प्रतीक बन गया। इस युद्ध ने अमेरिका को बड़ा झटका दिया, उसकी वैश्विक प्रतिष्ठा और आत्मविश्वास को भी गहरी चोट पहुँचाई। देश के अंदर भी इस युद्ध के खिलाफ व्यापक विरोध हुआ। लाखों अमेरिकी नागरिकों, विशेषकर युवाओं, ने इसे अनावश्यक और अमानवीय युद्ध करार दिया। शक्ति और संसाधन ही किसी युद्ध में जीत की गारंटी नहीं होते, परंतु जनता की इच्छा और नीति की स्पष्टता भी उतनी ही आवश्यक होती है। अमेरिका के पराजय से यह सिद्ध होता है कि, किसी राष्ट्र का आत्मबल और स्वदेशप्रेम अगर मजबूत हो, तो वह बड़ी से बड़ी महाशक्ति को भी चुनौती दे सकता है।

जापान यात्रा के अंतिम पड़ाव में लेखिका नागासाकी शहर के 'मेमोरियल पार्क' मे जाती है, वहां पर एक 'पीस स्टेचू' बना हुआ था। "जिसका एक हाथ आकाश की ओर इंगित करता हुआ तथा दूसरे हाथ की उंगलियां जमीन की ओर दर्शाती है। इस मूर्ति में यह भाव छिपा है धरती पर हुए इस विनाश के लिए इंसानों को माफ किया जाए और ऐसा भविष्य में दुबारा नहीं होना चाहिए। आकाश से लेकर धरती तक हर जगह, हर तरफ अमन, चैन, शांति बनी रहे। दाहिना हाथ न्यूक्लियर हथियारों के खतरे की ओर इशारा करता है और बाया हाथ शांति की ओर।"[50] प्रस्तुत प्रसंग के द्वारा माला वर्मा युद्ध की भीषणता, उसके दुष्परिणामों और शांति की आवश्यकता पर ध्यान केंद्रित करती हैं। नागासाकी पर गिराए गए परमाणु बम ने जितना विनाश किया, वह मानवता के इतिहास का एक काला अध्याय है। इसमे लाखों लोगों की जानें गईं, अनेक पीढ़ियाँ आज भी उस त्रासदी के दुष्परिणाम को झेल रही हैं। ऐसे में यह जरूरी है कि, दुनिया ऐसे हथियारों और विचारों से मुक्त हो, जो संहार और विनाश का कारण बनते हैं।

क्योंकि युद्ध में सिर्फ दुश्मन नहीं मरता, परंतु मानवता हारती है। इसीलिए माला जी ने 'पीस स्टेचू' को एक प्रतीक के रूप में वर्णित किया है, जो कहता है- 'हमें क्षमा करें और ऐसा फिर कभी न हो'। यह मूर्ति हर देखने वाले को यह सोचने पर मजबूर करती है कि हम कैसी दुनिया बनाना चाहते हैं ? विनाश की, या शांति की। माला जी को विश्व के देशों की युद्ध नीतियां बिलकुल भी पसंद नहीं है। उनका मानना है की युद्ध हमेशा दुष्परिणाम ही देता है। जापान पर हुए हमले से दुनिया को यह बोध लेना चाहिए की परमाणु हथियार कितने भयावह है। उनका उपयोग मनुष्य की सभ्यता के लिए, न पहले लाभकारी था, न आज है, न भविष्य मे कभी हितकर होगा। वर्तमान में संसार के देशों मे रशिया-यूक्रेन युद्ध हो, इस्राइल-हमास युद्ध हो या भारत-पाकिस्तान युद्ध हो, ये सारे देशों मे स्थिति तनावपूर्ण है। ऐसे में दुनिया को जापान से सीख लेनी चाहिए और युद्ध के मार्ग को त्यागना चाहिए। युद्ध का मार्ग नफ़रतों का मार्ग है, युद्ध का मार्ग अशान्ति का मार्ग है, युद्ध का मार्ग मनुष्यता की बर्बादी का मार्ग है।

इस विशालकाय मूर्ति को देखने तथा उसका उद्देश्य जानने के बाद माला वर्मा गहन विचार में पड़ जाती है। ओर लिखती है- "आख़िर हम मनुष्य जाति अपने इस एक जीवन में चाहते क्या हैं ? उन्नति, सुख-सम्पदा, मन की शान्ति, दूसरों के साथ मानवतापूर्ण रहना या कि सब कुछ खत्म कर देना ? हम अपने 'इगो' अहंकार की भूलभ्रांति में यह सोचते हुए जी रहे हैं कि मैं, मैं हूँ, मैं ही सुप्रीमो हूँ। मैं हूँ तो ये जग है, मैं हूँ तो ये दुनिया कायम है। लेकिन सच्चाई तो यह है कि हम कुछ भी नहीं हैं। इस ब्रह्मांड में हमारी स्थिति, हमारी औकात समुद्र में व्याप्त जल की एक बूँद समान भी नहीं, हम दुनिया के समस्त रेगिस्तान में स्थित बालु के एक कण के बराबर भी नहीं। फिर किस बात का युद्ध और किस बात का अहम जिसमें लाखों लोगों की जान चली जाती हैं ? जाने ये सत्ता की भूख कब ख़त्म होगी।"[51] मनुष्य अपने अहंकार में डूबा रहता हैं, जबकि इस ब्रह्मांड में उसकी औकात कुछ भी नहीं है। वह समुद्र की एक बूँद या रेगिस्तान के एक कण जितना भी नहीं हैं। इसके बावजूद वों युद्ध करता हैं, सत्ता के लिए लड़ता हैं, और लाखों लोगों की जानें ले लेता हैं। प्रसंग के माध्यम से माला जी आह्वान करती है कि, मनुष्य जीवन बहुत छोटा है। इसे मानवता, शांति तथा विनम्रता के साथ जीना चाहिए। हमारे छोटे से जीवन का उद्देश्य विनाश नहीं, बल्कि सह-अस्तित्व और प्रेम होना चाहिए।

माला वर्मा का मानना है कि युद्ध से कभी किसी राष्ट्र का भला नहीं होता परंतु युद्ध से जान मान का नुकसान होता है इस संदर्भ में लेखिका कहती है- "दुनिया के वो तमाम तानाशाह जो ये समझते हैं कि किसी पर शासन करने के लिए युद्ध ही अंतिम औज़ार हो सकता है तो ये गलत नीति है। युद्ध और नफरत

से न कभी किसी का भला हुआ है और न ही होगा। इसमें दोनों का नुकसान है। जान माल की हानि से कोई देश नहीं बच सकता। चाहे वो कितना बड़ा सुप्रीमो ही क्यों न हो! जियो और जीने दो की पॉलिसी पर सब चले तो हर जगह ओम शांति ओम रहेगा।"[52] प्रस्तुत प्रसंग में माला वर्मा ने युद्ध की निरर्थकता और तानाशाही प्रवृत्ति की आलोचना की है। वह स्पष्ट करती हैं कि शक्ति प्रदर्शन और शासन की लालसा में युद्ध को अंतिम उपाय मानना मानवता के विरुद्ध एक विनाशकारी नीति है। युद्ध और नफरत न तो अतीत में किसी के हित में थे और न ही भविष्य में होंगे। इससे केवल रक्तपात, पीड़ा और जान-माल की हानि होती है, जिसमें विजेता और पराजित दोनों पक्ष अंततः क्षतिग्रस्त होते हैं। माला जी 'जियो और जीने दो' की नीति को अपनाने का आह्वान करती हैं, जो विश्व शांति और सहअस्तित्व का आधार बन सकता है। उनका आशय यह है कि, यदि सभी देश आपसी सम्मान, अहिंसा और शांति की राह पर चलें, तो धरती पर 'ओम शांति ओम' का दिव्य वातावरण संभव है।

दो देश जो आपस में दुश्मन समान है। लेकिन प्राकृतिक आपदा आने पर एक दूसरे को सहयोग के लिए किस तरह से आगे आते हैं, प्रीति सेनगुप्ता ने यहां पर विस्तृत वर्णन किया है- "1984 ना सप्टेंबरमां बन्यो वरसाद अने सागर परथी चड़ी आवता वंटोड़ियाना वार्षिक, पण आ वर्षे अति प्रचंड, तोफानथी ताराज थयेला दक्षिण कोरियानी मददे उत्तर कोरिया आव्युं। त्रीस वर्षनुं वेर अने तिरस्कारपूर्ण मौन त्यजीने उत्तर कोरियाअे मानवता अने महानुभाव दाखव्यां। मुश्केलीमां मुकायेला पाड़ोशीओने, जातभाईओने 370 ट्रक भरीने अन्न, कपड़ां, दवा, सिमेन्ट वगेरे आवश्यक वस्तुओनी सहाय करी।"[53] इस मार्मिक घटना के द्वारा प्रीति सेनगुप्ता स्पष्ट करती हैं कि, भले ही दो देशों के बीच राजनीतिक, वैचारिक स्तर पर गहरी दुश्मनी क्यों न हो, लेकिन मानवता की पुकार उन तमाम सीमाओं और दीवारों को पार कर जाती है। 'उत्तर कोरिया' और 'दक्षिण कोरिया' भले ही तीन दशक से भी अधिक समय तक परस्पर संवादहीनता, कटुता और वैमनस्य की स्थिति में रहे हों, लेकिन 1984 में आए विनाशकारी तूफान के समय उत्तर कोरिया ने जो सहायता दी, वह सच्चे मानव धर्म और सह-अस्तित्व की भावना का प्रतीक बन गई। लेखिका बताती हैं कि, उस वर्ष दक्षिण कोरिया भयंकर प्राकृतिक आपदा से जूझ रहा था। ऐसे समय में उत्तर कोरिया ने 370 ट्रकों से भोजन, कपड़े, दवाइयाँ, सीमेंट आदि आवश्यक वस्तुएँ भेजकर न केवल सहायता दी, बल्कि वर्षों पुराना वैर भूलाकर भाईचारा और सहयोग का भाव दिखाया। इस प्रकार उत्तर कोरिया का यह कदम महज राहत सामग्री भेजना नहीं था, परंतु यह वह भावनात्मक पुल था, जिसने शत्रुता को मित्रता में बदला। इस प्रसंग के माध्यम से प्रीति जी संकेत करती हैं कि, राजनीति चाहे कितनी ही कठोर हो, किंतु आम

नागरिकों और देशों के बीच मानवीय मूल्यों की नींव कहीं गहरी और मजबूत होती है। संकट के समय, नफरत और मतभेदों की दीवारें कमजोर पड़ जाती हैं और तब सच्ची मानवता एवं करुणा सामने आती है।

यह घटना बताती है, अगर मनुष्य चाहें तो वर्षों पुरानी कटुता को सहयोग और उदारता द्वारा मिटाया जा सकता है। यह दो देशों के संबंधों की बात की बजायं वैश्विक स्तर पर भी एक प्रेरक उदाहरण है। यह घटना इंगित करती है की, दुश्मनी के बजाय सामूहिक कल्याण और एकता को चुना जा सकता है। प्रीति सेनगुप्ता इस ऐतिहासिक घटना के माध्यम से समझाना चाहती हैं कि, कोई भी दीवार इतनी ऊँची नहीं होती, जिसे पारस्परिक मानवता से न तोड़ा जा सके। आपदा के समय दिखाया गया यह सहयोग और सौहार्द इस बात का प्रमाण है कि, दुनिया को जोड़ने की ताक़त सियासत से नहीं, संवेदना से आती है।

'हिरोशिमा' शहर दर्शन के दौरान प्रीति सेनगुप्ता 'ऐटम बम' से हुए शहर के नुकसान को देखकर बहुत ही व्याकुल होती है। उनका मानना है कि, भले दुनिया के बुद्धिजीवी ऐसा कहे कि, फिर से यह शहर खड़ा हो गया है। औद्योगिक प्रगति के राह पर आगे बढ़ रहा है, लेकिन प्रीति जी को ऐसा बिल्कुल नहीं लगता है। यहाँ विचरण करते हुए महसूस होता है की, कहीं ना कहीं इस शहर का सौन्दर्य खो गया है। हिरोशिमा शहर का दुर्भाग्य रहा कि, यह हमला इसके क्षेत्र में हुआ। लेखिका का मानना है कि समग्र मानव जाति को इस घटना से बोध लेना चाहिए। जिससे दुनिया मे दुबारा ऐसी भयंकर घटना ना घटे और कई लाखों निर्दोष लोगों की जान ना जाएं। लेखिका इस संदर्भ मे लिखती है- "शहेरने योजना वगर, उतावड़मां बांधी देवामां आव्युं होय तेम लाग्या करे छे, कारण के अे जरा पण सुंदर नथी। थोड़ी घणी मोटी ईमारतो सिवाय बीजां बधां रुग्ण जेवी दशावाड़ां घरो छे, अने कंगाल लागती चालीओ छे। तड़कावाडा गरम दिवसे बधां ज चालीवासीओ पोतपोतानां ओढवानां-पाथरवानां बालकनीमां सुकववा, ताजा करवा नाखे छे। जगतना इतिहासमां अेनुं रुधिराक्षरे नाम लखाई गयुं छे, फरी जन्म पामी अेने दुर्भाग्य पर विजय जरुर मेड़व्यो छे, पण अेना व्यक्तित्वमां कशुं खूटतुं रही गयुं छे अेम मने लाग्युं।"[54] हिरोशिमा ओर नागासाकी पर हुआ हमला वाकई बहुत भयावह व दर्दनायक था। मानवता पर हुआ अब तक का यह सबसे घातक हमला था, इसकी भरपाई अब तक दुनिया कर रही है। वर्तमान में वहाँ का जीवन संघर्ष भरा है, अभी भी कई हिस्सों में परमाणु बम के रेडिएशन का असर इस क्षेत्र में देखने को मिलता है। प्रस्तुत घटना से देश-दुनिया को बोध मिलता है की, इस तरह का हमला मानवता के अस्तित्व पर हमला है। हिरोशिमा एवं नागासाकी के इतिहास से बोध लेकर विश्व को तय करना होगा की, भविष्य में इस तरह का हमला दुबारा न हो।

'निर्मल वर्मा' जर्मनी यात्रा के दौरान 'चिड़ों पर चाँदनी' पुस्तक में लिखते है- "वह मेरे लिए अभी तक जीवित है, प्रतीक्षारत है, और जब तक मैं उसे अन्य प्राणियों की तरह भोग नहीं लूँगा, वह मुझसे छूटेगा नहीं। नहीं।"[55] आगे निर्मल वर्मा कहते है- "इतिहास की यह क्रूर विडम्बना ही है कि सबसे अधिक यातना एक ऐसी जाति-यहूदियों को भुगतनी पड़ी, जिसका अपना कोई राष्ट्रीय परिवेश नहीं था, किन्तु जो यूरोप की सबसे पुरातन और समृद्ध परम्परा का प्रतिनिधित्व करती थी। किन्तु यहूदियों की यह परम्परा उनको लाखों की संख्या में उन यातना-गृहों में मरने से नहीं बचा सकी, जिनका निर्माण यूरोप की राष्ट्रीय धारा के सबसे प्रमुख समर्थक ने किया था। क्या इसे केवल ऐतहासिक संयोग माना जाए कि हिटलर ने समूची यहूदी-संस्कृति को नष्ट करने का इतना व्यापक अभियान चलाया था।"[56] प्रस्तुत प्रसंग में निर्मल वर्मा ने हिटलर द्वारा यहूदियों पर की गयी यातनाओं का वर्णन किया है, जो मानव सभ्यता के इतिहास में अत्यंत कलंकित घटना थी। इतिहास की इन क्रूर घटनाओं से वर्तमान समाज को सबक लेना होगा। तब जाकर संसार में शांति व्यवस्था स्थापित हो पाएगी।

माला वर्मा और प्रीति सेनगुप्ता के यात्रा साहित्य में, इतिहास बोध लेखन तथ्य व तर्क पर आधारिक इतिहास बोध है। उसमे भाऊकता या छिछलापन का सर्वथा अभाव है। इतिहास की तथ्यपूर्ण जानकारियां आलोच्य लेखिकाओं के यात्रा साहित्य की मुख्य विशेषता है। निष्पक्ष इतिहास बोध ही विषय की विवेचना में न्याय कर पाता है। इस रूप में माला वर्मा एवं प्रीति सेनगुप्ता दोनों लेखिकाओ ने अपने विषय के साथ न्याय किया है। यह इनके इतिहास बोध का प्रमाण है।

5.7 उद्देश्य : यात्रा साहित्य के तत्त्व के रूप में उद्देश्य का महत्वपूर्ण स्थान है। निष्प्रयोजन से कोई कार्य नहीं होता है। प्रत्येक कार्य किसी प्रयोजन के हेतु से होता है। माला वर्मा और प्रीति सेनगुप्ता के यात्रा साहित्य का भी अपना-अपना लक्ष्य है। वे देश दुनिया के भ्रमण द्वारा संसार की विभिन्नताओं को नजदीक से देख-समझ रही है। तथा संसार के कलात्मक उत्कर्ष का चित्रण अपने यात्रा लेखन के माध्यम से कर रही है। आलोच्य लेखिकाओं का प्रमुख यात्रा उद्देश्य समाज को भिन-भिन्न संस्कृति, वहाँ के स्थापत्य शैली, वहाँ की परायवर्णीय विविधता, वहाँ की संस्कृति से अवगत कराना है। माला वर्मा एवं प्रीति सेनगुप्ता के यात्रा साहित्य में उद्देश्य तत्व में विविधता है, जिसका विवरण इस प्रकार से है-

यात्राओं का अपना उद्देश्य होता है। यात्राओं में कई बार बहुत सी नई बातें निकल कर सामने आती है। और मनुष्य के विकास में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह भी करती है। माला वर्मा चीन के रेशम का जिक्र करते हुए कहती है कि- "चीनी इतिहास के अनुसार सिल्क यानि रेशम की शुरूआत सर्वप्रथम चीन

में आज से लगभग साढ़े चार हजार वर्ष पूर्व हुई थी (ईसा पूर्व 2700)। उस समय इसका प्रयोग सिर्फ चीन में होता था मगर सिल्क रोड का पता चलते ही सन् 500 ईस्वी के आसपास सिल्क का प्रयोग मध्य एशिया, अरब तथा यूरोप में भी होने लगा। इस उद्योग में चीन का एकछत्र राज्य था जो सैकड़ों वर्षों तक बरकरार रहा। चीन ने अपनी इस कला को दुनिया से छिपा कर रखा था मगर बौद्ध धर्म के प्रचार के साथ-साथ सिल्क बनाने की कला जापान कोरिया तथा। भारत पहुँची तथा सन् 1500 के आसपास अरब होते हुए यूरोप पहुँची।"[57] प्रस्तुत प्रसंग के माध्यम से माला जी, रेशम, सिल्क की उत्पत्ति और उसके विकास की ऐतिहासिक पृष्टभूमि का विवरण देती है। एवं इसकी उत्पत्ति में चीन की क्या भूमिका रही, इसका विश्लेषण भी माला जी यहां प्रस्तुत करती है।

धीरे-धीरे यह कला धार्मिक और व्यापारिक कारणों से अन्य देशों तक पहुँची। माला जी का चीन यात्रा का उद्देश्य पाठकों को रेशम के इतिहास एवं उसके व्यापार का प्रारंभ कैसे हुआ इसकी जानकारी से अवगत कराना है। यहां माला जी पाठकों को केवल रेशम के इतिहास की जानकारी नहीं देती, अपितु यह भी बताती हैं कि सांस्कृतिक तथा धार्मिक संपर्कों जैसे बौद्ध धर्म का प्रचार के कारण कैसे ज्ञान और कौशल का आदान-प्रदान संभव हुआ है। इस तरह, माला वर्मा का उद्देश्य यहां रेशम की ऐतिहासिक यात्रा के माध्यम से वैश्विक संपर्कों और सांस्कृतिक विस्तार को रेखांकित करना है।

जापान यात्रा के दौरान प्रीति सेनगुप्ता का मानना है कि, किसी भी स्थान की पहले से धारणा बना लेना ठीक नहीं है। धारणा बनाने से पहले उस स्थान पर कम से कम दो बार या उससे अधिक बार तो जाना चाहिए। इस संदर्भ में लेखिका कहती है- "कोई पण स्थड़ विशे मत बांधी लेतां के दृढ़ निर्णय करी लेता पहेलां अेने अेकथी वधारे वार जोवुं जोइअे अेम मने लाग्या करे छे, ने ते पण फक्त प्रवासीनी ऊपरछल्ली दृष्टिथी नहीं, पण अेना नागरिकनी दृष्टिअे। स्थड़ोनां व्यक्तित्व, वातावरण, उंड़ाण ने अेनी सर्वव्यापी यथार्थताने निरपेक्ष न्याय करवो होय तो त्यां बे वार तो जवुं ज जोइअे अेवु हूं सिद्धांतपूर्वक मानती थई छूं।"[58] प्रीति सेनगुप्ता के यात्रा अनुभवों से ज्ञात होता है, किसी भी जगह, देश के बारे में धारणा बनाने में जल्दबाज़ी नहीं करना चाहिए। लेखिका कहती हैं कि, कोई भी ठोस मत या निर्णय तब तक नहीं लेना चाहिए, जब तक उस क्षेत्र को बार-बार, गहराई से विभिन्न दृष्टिकोण से देखा और समझा न जाए। प्रीति जी का मानना है की, पर्यटक और स्थानीय नागरिक दोनों के दृष्टि में स्थान को देखने व समझने में काफी अंतर हो सकता है। किसी स्थल को देखने समझने में 'पर्यटक को सीमित समय मिलता है। ऐसे में किसी स्थान की धारना बनाना न्याय संगत नहीं है। इसमें उस जगह की सच्चाई का अधूरा चित्र मिलता है। जब

की स्थानीय नागरिक की दृष्टि में ये भेद होगा, क्योंकि वह व्यक्ति वहां पर अनेक वर्षों से रह रहा है, इसलिए वह वहां की सभ्यता, संस्कृति, रहन-सहन, परिवेश को अच्छी तरह से जानता है। दोनों मे केवल इतना अंतर है, नागरिक उस स्थल पर पर्यटक की तुलना मे ज्यादा समय तक रहता है। जिसके फलस्वरूप नागरिक के पास उस स्थान की सटीक व अधिक जानकारी होती है। इसलिए किसी भी स्थान को जानने तथा समझने के लिए व्यक्ति को स्थानीय नागरिक की दृष्टि से विश्लेषण करना होगा। पर्यटक के दृष्टि से केवल ऊपरी जानकारी ही प्राप्त की जा सकती है।

आगे प्रीति सेनगुप्ता कहती है की, किसी देश, स्थान की वास्तविक समझ का पता लगाने के लिए, सबसे पहले उसके इतिहास के बारे में जान लेना चाहिए। अधिकांश लोग जब किसी नए देश या स्थान की यात्रा करते हैं, तो वे केवल उसकी वर्तमान भौतिक स्थिति या दर्शनीय स्थल ही देखते हैं। लेकिन प्रीति जी कहती हैं, किसी स्थान की आत्मा, उसकी सच्ची पहचान उसके इतिहास में छिपी होती है।

"जे देशमां फरवा जइअे तेना इतिहास साथे माथाकूट करवानी जरूर घणांने ना लागे, पण मने थया करे के बनी गयेला बनावोनी केटली बधी असर, केटलां बधा वर्षों सुधी, जमाना सुधी, आज पर, आवती काल पर पड़ती रहे छे। जो सहेज पण अेना समग्रीकरणनी जान ना करीअे तो देशोनी, स्थड़ोनी समजन कई रीते विकसे ?"[59] बहुत से लोगों को लगता है कि, यात्रा के दौरान इतिहास से जूझने या उसके बारे में जानने की जरूरत नहीं है। इस तरह के विचार रखने वालों से प्रीति जी असहमत हैं। उनके अनुसार, अतीत में जो घटनाएं घट चुकी हैं, उसका प्रभाव कई वर्षों तक समाज में रहता है। वे घटनाएं वर्तमान समाज, संस्कृति एवं राजनीति और मानसिकता को आकार देती हैं। इसलिए यदि हम इतिहास को अनदेखा कर देंगे, तो वर्तमान को ठीक से नहीं समझ पाएंगे। इस प्रसंग के द्वारा प्रीति जी बताना चाहती है कि, यात्राएं केवल मनोरंजन, नए अनुभवों तक सीमित नहीं होनी चाहिए। यदि हम किसी स्थान की वास्तविकता को समझना चाहते है, तो उसके अतीत को जानना आवश्यक है। अतीत ही वर्तमान की नींव है और भविष्य का मार्गदर्शक भी। इतिहास की उपेक्षा करके गहराई वाली समझ विकसित नहीं की जा सकती है। इसलिए, लेखिका पाठकों और यात्रियों से आग्रह करती है कि, वे इतिहास के प्रति जागरूक बनें। जहां भी जाएं, उस स्थान की ऐतिहासिक परतों को समझने का प्रयास करें। तभी यात्रा एक गहरे अनुभव और सीख में बदल सकती है।

स्वयं को जानना, आत्ममंथन करना, यह सारी प्रक्रिया यात्रा के द्वारा ही संभव हो सकती है। प्रीति जी आगे कहती है, "मारे माटे परिभ्रमण अधिगमन पण छे, फक्त उत्कतेच्छा के आसक्ति नहीं, पण जीवनरीति

अने विचार धर्म पण छे। फरवामां अकल्पप्राप्ति छे, निरपेक्ष आनंद छे, अने कठिनता पण छे। जीवननी अपूर्णताओं खूंचती होय छे। दररोजनी अशक्तिओ निराश करती होय छे। त्यारे नूतन, अपरिचित स्थानो तरफ गति आ अधूरपने सह्य बनावे छे, अथवा तो ढांकी दे छे। जे स्थाननी अशक्तिओ आपणे जानतां ना होइअे ते कनडे पण नहीं। ने तेथी अनिंघ, अणीशुद्ध मनोभावनु अन्वेषण कशी खरेखर अपेक्षा वगर चालु रहे छे।"[60] यहां लेखिका कहना चाहती हैं कि, यात्रा केवल स्थानों का भौतिक अनुभव नहीं है, यह एक आंतरिक अनुभव है, जहां व्यक्ति अपने मन की गहराइयों में उतरता है, खुद को समझता है, अपने जीवन की क्षणिक समस्याओं से स्थायी रूप से उबरने का प्रयास करता है। यात्रा आत्मिक शुद्धि और मानसिक शांति की ओर बढ़ने की एक प्रक्रिया बन जाती है।

जब कोई व्यक्ति बिना किसी सहायता के अनजान जगह पर जाता है, तो वह हर परिस्थिति से खुद निपटना सीखता है। यही आत्म-निर्भरता जीवन के अन्य क्षेत्रों में भी सहायक सिद्ध होती है। समान विचार प्रीति जी यहां प्रस्तुत करती है। "अेकलां फरतां फरतां लागणीओ सतत अनुभवाती रहे छे। मन सतेज थइने रहे छे। कशा नियम के अनुक्रम नहीं, हंमेश कशा सखा-संगी के संसर्ग नहीं, अतीतनो कोई आश्रय नहीं, भवितनी कोई परिभाषा नहीं-अने वास्तविकता रुक्ष, विषम अने प्रत्यक्ष।"[61] अकेले यात्रा करना, व्यक्ति को अंदर से बहुत मजबूत बनाता है, सबसे मुख्य बात अकेले यात्रा से व्यक्ति में साहसिकता के गुणों का विकास होता है। यात्रा व्यक्ति को अपने भीतर झाँकने, अपनी सीमाओं को परखने, और जीवन की मूलभूत सच्चाइयों से जुड़ने का अवसर देती है। यह यात्रा आत्म-निर्भरता, आत्म-संवाद और आत्म-विश्वास की यात्रा है। बेशक, इसमें चुनौतियाँ होती हैं, सुरक्षा, अकेलापन, अनिश्चितता लेकिन यही चुनौतियाँ इसे मूल्यवान बनाती हैं।

आज के भागदौड़ वाले जीवन में, जहाँ व्यक्ति हमेशा भीड़ में खोया रहता है, अकेली यात्रा उसे फिर से अपने भीतर लौटने और स्वयं को खोजने का अवसर देती है। यही इसकी सबसे बड़ी विशेषता है। व्यक्ति के मन में अकेले यात्रा करते समय भविष्य की कोई चिंता नहीं होती। अतीत का कोई रूखापन नहीं होता। केवल वर्तमान में जो है, वही साद्रश्य होता है। प्रीति सेनगुप्ता अपने यात्रा के उद्देश्य बताते हुए कहती है कि, नए-नए परिवेश को जानना, नए जगह में घूमने, छोटे-छोटे क्षणों को इकट्ठा करके विशाल महल बनाना उन्हें पसंद है। लेखिका के अनुसार- "निकड़ी पड़ुं छुं घर छोड़ी, देश-वेश छोड़ी-परिव्राजक बनी। जे मड़े ते माणवानुं। क्षणोने चणीने महेल बांधवानो। कोई वार कशुं न गमतुं के अपमान लागे तेवुं पण बने, ने त्यारे अे महेल थोड़ों तुटी पण जाय।"[62] आगे यात्रा के उद्देश्य मे प्रीति जी बताती है- "अेक घरडा जेवो

मानस आवीने मने कहेवा लाग्यो के, 'अेकली छे तो संभाडजे। थाई पुरुषो सारा नथी। पैसा जोशे तो खेंची लेशे। अंधारूं थये अेकली बहार नीकड़ती नहीं'। में डोकुं घुणाव्या कर्यु। कोई अजाण्याने मारी चिंता थई हती। केतलांये जानीतां कशी पडी पण नथी करतां, आ पण भ्रमणनुं अेक कारण। अजाण्यां समभव बतावे, ने जगत पर विश्वास टकी रहे। अजाण्यां छेतरी पण जाय, ने तोये माफ करी देवाय।"[63] 'थायलैंड' यात्रा के दौरान एक अजनबी बुजुर्ग व्यक्ति, प्रीति सेनगुप्ता को सावधानी बरतने की सलाह देता है। यात्रा के दौरान ऐसे अनुभव व्यक्ति को हर्ष-उल्लास से भर देते है। यात्राओं में ऐसे अजनबी पात्र भी मिलते है, जिन्हें वाकई बाहर से आए व्यक्ति की चिंता होती है। इस प्रकार के अनुभव से यात्रा करने वाले लोगों का आत्मविश्वास बढ़ता है। अजनबी लोगों से मिले अनुभव चाहे वे अच्छे हों या बुरे पर जीवन में गहरी छाप छोड़ते हैं। वे यह सिखाते हैं कि, दुनिया में भरोसे की भावना, संवेदना और क्षमा के विचार अभी भी जीवित है। यही अनुभूति हमें आगे बढ़ने की शक्ति देती है।

'उत्तर ध्रुव' पर कदम रखने वाली, प्रीति सेनगुप्ता भारत की पहली महिला है। उत्तर ध्रुव पर सफलतापूर्वक पहुंचने के बाद उनकी खुशी का वर्णन स्वयं लेखिका इस तरह से करती है- "मारूं स्वप्न सिद्ध थयुं हतुं। हूं चुंबकीय उत्तर ध्रुव पर आवी पहोची हती। त्यां पहोंचनार हूं प्रथम भारतीय स्त्री के मुसफर बनी हती। मारी 'जीवनशक्ति' अे बधां वर्षोंमां थइने मारा जीवनना सौथी अर्थपूर्ण आ समय सुधी मने धारण करी हती। सर्वस्वरना सर्जककर्ता प्रत्येना ऋणभावथी मारी आँखोमां आंसु आव्यां अने मारूं हृदय आनंदथी झूमी उठयुं।"[64] प्रीति जी, उत्तर ध्रुव के यात्रा अनुभव को जीवन की सबसे महत्वपूर्ण घटना बताती है। यह पल सिर्फ एक रोमांच नहीं था, परंतु उनके जीवन की सार्थकता का प्रतीक बन गया था। 'जीवनशक्ति' शब्द का प्रयोग करके प्रीति सेनगुप्ता स्पष्ट करती हैं, यह उपलब्धि उनके आंतरिक ऊर्जा, आत्मबल और मानसिक दृढ़ता का परिणाम है। यह शक्ति उन्हें कठिन से कठिन परिस्थिति में आगे बढ़ने की प्रेरणा देती रही। प्रीति सेनगुप्ता कहती हैं, 'मारूं स्वप्न सिद्ध थयुं हतुं' इस वाक्य में उनके लम्बे संघर्ष, तपस्या और समर्पण की झलक मिलती है, जो उन्होंने इस स्वप्न को साकार करने के लिए किया। यह केवल एक व्यक्तिगत विजय नहीं थी, परंतु यह समस्त भारतीय नारी शक्ति की विजय थी। यह नारी के मजबूत इरादे की जीत थी। यह नारी के होसलें, जीवन की तपस्या की विजय थी। प्रीति सेनगुप्ता यायावरों के लिए एक प्रेरणा बन गई। प्रीति जी गर्व से कहती हैं कि, वह 'उत्तर ध्रुव पर पहुंचने वाली प्रथम भारतीय स्त्री मुसाफिर बनीं।' यह प्रसंग आत्मा की असीम क्षमता, नारीशक्ति की प्रेरणा, और कठिन परिश्रम से प्राप्त की गई

सच्ची सफलता का प्रतीक है। यह यात्रा हमें सिखाती है कि, जीवन में बड़े लक्ष्य केवल भौतिक नहीं होते। लेखिका का अनुभव पाठकों को प्रेरित करता है, वे अपने स्वप्नों का पीछा करें और कभी हार न मानें।

माला वर्मा और प्रीति सेनगुप्ता दोनों ही भारतीय यात्रा साहित्य की सशक्त लेखिकाएँ रही हैं, जिनकी यात्राओं के पीछे भिन्न-भिन्न उद्देश्य रहे हैं, जो उनके लेखन में स्पष्ट झलकते हैं। माला वर्मा की यात्राओं का प्रमुख उद्देश्य सामाजिक यथार्थ को समझना, स्त्री अनुभवों को साझा करना और नए क्षेत्रों में जाकर वहाँ के जनजीवन को नज़दीक से जानना रहा है। उनके यात्रावृत्तांतों में मानवीय संवेदनाएँ और सामाजिक सरोकार स्पष्ट रूप से दिखाई देते हैं।

प्रीति सेनगुप्ता की यात्राएँ मुख्यतः सांस्कृतिक, ऐतिहासिक और खोजपरक रही हैं। उन्होंने विश्व के कई देशों की यात्राएँ कीं और वहाँ की कला, संस्कृति, सभ्यता के महत्व की चीज़ों को अपनी दृष्टि से देखा और प्रस्तुत किया है। उनका उद्देश्य पाठकों को विश्व के विविध अनुभवों का बोध कराना एवं प्रेरणा प्रदान करना रहा है। वे स्थानों को केवल बाहर से नहीं, भीतर से जानने का प्रयास करती हैं, जिससे उनके लेखन में एक गहरी व्यापक दृष्टि देखने को मिलती है। इस प्रकार, माला वर्मा की यात्राएँ अधिक मानवीय और सामाजिक सरोकारों से जुड़ी थीं, जबकि प्रीति सेनगुप्ता की यात्राएँ सांस्कृतिक अनुभव और वैश्विक दृष्टिकोण को प्रस्तुत करने वाली है।

5.8 रोचकता : यात्राएं रोचकता का प्रतीक होती है। एक मुसाफिर को यात्राओं के दौरान तरह-तरह के भरपूर रोचक अनुभव होते है, जैसे किसी अंजान व्यक्ति से संबंध स्थापित होना, किसी अंजान समाज के लोगों से जुड़ना, किसी रीति रिवाज परंपरा को जानना, प्रकृति के संबंध में नयी जानकारी प्राप्त करना शामिल है। आलोच्य लेखिकाओं के यात्रा साहित्य में रोचकता तत्त्व प्रचुर मात्रा में दृष्टिगोचर होता है। जो इस प्रकार है-

'मिस्त्र' यात्रा के समय माला वर्मा वहां के 'ममीकरण' प्रक्रिया का वर्णन बड़े रोचक ढंग से करती है– "ममीकरण एक लंबी प्रक्रिया थी जिसमें सत्तर दिन लगते थे। इसके तहत 'ओपनिंग ऑफ द माउथ' (Opening of the mouth) एक ऐसी प्रक्रिया थी जिसे कोई नामी पुरोहित या राजा ही किया करता था। 'तूतनख़ामन' के मरने के बाद 'ओपनिंग ऑफ द माउथ' की रस्म उसकी पत्नी 'अंखेसनपाटन' ने की। इस क्रिया में मुँह के अंदर छिद्र करके मस्तिष्क को बाहर निकाल लिया जाता था। इसी तरह शरीर के कुछ अन्य अवयव (Viscera) जैसे कि फेफड़ा (Lings), लीवर-पाकस्थली (Stomach) तथा अंतड़ियाँ

(intestine) बाहर निकालकर एक अलग पात्र में सुरक्षित रख दिए जाते थे।"[65] यह समझना आवश्यक है कि, शव के गलने-सड़ने की प्रक्रिया में कुछ विशेष अंगों की भूमिका प्रमुख होती है। इस कारण, इन अंगों को शरीर से अलग कर दिया जाता था। ताकि शव को सड़ने से रोका जा सके। अंगों को निकालने के पश्चात, उन पर विभिन्न प्रकार के रासायनिक पदार्थों का लेप लगाया जाता था। इसके बाद शव को कपड़े में सावधानीपूर्वक लपेटा जाता, जिससे ममीकरण की प्रक्रिया पूरी होती थी। तत्पश्चात इस ममी को एक राजकीय समारोह के साथ पिरामिड की ओर ले जाया जाता था, जो कुछ दूरी पर स्थित होता था। पिरामिड में प्रवेश का मार्ग सदैव पूर्व दिशा की ओर होता था। यही कारण है कि सारे पिरामिड नील नदी के पश्चिमी तट पर बनाए गए थे ताकि उनका मुख पूर्व की ओर, अर्थात् उगते सूर्य की दिशा की ओर, स्थित रह सके। पुरातात्विक सर्वेक्षण विभाग के लिए ये शोध का विषय है, एवं साहित्यिक क्षेत्र के लोगों के लिए यह स्थान रोचकता से भरा हुआ है।

माला वर्मा टोक्यो के रेल्वे स्टेशन का वर्णन कुछ इस तरह करती है –"बाप रे! ये स्टेशन था या फिर कोई एयरपोर्ट, भीड़ भी अच्छी-खासी। कभी एस्केलेटर पर चढ़ते तो कभी सीढ़ियाँ तो कभी तेजी से समतल जगह पर चलते। भव्यता की पूछिए मत। जीवन में ऐसा रेलवे स्टेशन नहीं देखा था। सजा-सँवरा तो था ही हर तरफ़ बाज़ार हाट दिखा। लग ही नहीं रहा था हम किसी रेलवे स्टेशन पर हैं। और जो ट्रेन पकड़ने जा रहे थे वो क्या ऐसी-वैसी ट्रेन थी। भई ! बुलेट ट्रेन थी जो एक बार शुरू होती तो बुलेट की तरह छूटती है।"[66] लेखिका बुलेट रेल स्टेशन की भव्यता और उसके आस पास बने बाजार हाट को देखकर बहुत प्रसन्न होती है। उन्हें मालूम ही नहीं पड़ता कि, वह किसी रेलवे स्टेशन पर है, यहां की सुंदरता किसी एयरपोर्ट से कम न थी। बुलेट ट्रेन मे सफर करना, माला वर्मा का सपना था और अब वह साकार होने जा रहा था। लेखिका बुलेट ट्रेन का बारीकी से वर्णन इस तह करती है- "ट्रेन के आगे-पीछे दोनों साइड में इंजन लगा था और आकार वही डॉल्फिन वाली, यानी ट्रेन दोनों साइड से आगे बढ़ सकती थी। दूध-सी धुली सफ़ेद रंगत वाली ये बुलेट ट्रेन ट्रैक से उठ मेरे दिलो-दिमाग पर छा गई। आँखों में चंद बूँद आँसू तिर आए।"[67] बुलेट ट्रेन में बैठने का सपना लेखिका कई वर्षों से देख रही थी। सपना साकार होने की खुशी से उनकी आंखे आसुओं से भर जाती है। यह पूरा प्रसंग तब मार्मिक बन जाता है। यात्रा के दौरान माला वर्मा बुलेट ट्रेन के अंदरुनी हिस्से की विशेषता का वर्णन करती है- "हमने इस बुलेट ट्रेन का वॉश रूम देखा, दंग रह गई। पूरा सिस्टम हवाई जहाज वाला था। उसके पास ही कॉरीडोर में दो वॉशबेसिन, आइना आदि सजा था। एक में पर्दा लगा था। चाहे तो पर्दा खींच सिंगार पटार कर लें। बेहद साफ़-सुथरा और बेहद

सुविधापूर्ण। नलके से गर्म पानी आ रहा था। ट्रेनों में इस कदर दी जाने वाली सुविधा मैं पहली बार देख रही थी। वैसे ये दुनिया की सबसे सुन्दर, सबसे रोमांचकारी, सबसे नामी गिरामी ट्रेन बुलेट ट्रेन थी। इसकी तुलना दूसरी ट्रेनों से नहीं की जा सकती है।"[68] माला वर्मा के अनुभव से ज्ञात होता है, बुलेट ट्रेन के निर्माण मे उन्नत टेक्नॉलजी का उपयोग किया गया है। जो यात्रियों को सुविधा के साथ आरामदायक सफर का आनंद देता है। बुलेट ट्रेन आधुनिक युग का एक क्रांतिकारी आविष्कार है, जो तेज गति, सुरक्षा और सुविधा का अनूठा संयोजन प्रदान करती है। यह न केवल यात्रा का समय कम करती है, वरन पर्यावरण के अनुकूल और आर्थिक रूप से लाभप्रद भी है। भविष्य में और अधिक देश इस तकनीक को अपनाकर अपने परिवहन ढांचे को मजबूत करेंगे ऐसा माना जा सकता है। भारत मे मुंबई अहमदाबाद हाई स्पीड बुलेट ट्रेन, का कार्य जारी है, जो जापानी तकनीक पर आधारित है। 2028 तक इसके पूर्ण होने की संभावना मानी जा रही है। यह सब देखने के बाद लेखिका को लगता है की, हमारे भारत मे भी ऐसी सुविधाए हो, तभी उन्हे भारतीय लोगों पर आक्रोश हो उठता है, लेखिका के शब्दों मे "हमारे भारत में इस बात की शिकायत होती है कि नई ट्रेनों में विदेशों जैसी सुविधा नहीं दी जाती। किन्तु ट्रेन को गंदा कौन करता है? नई ट्रेन जब पटरी पर उतरती है तो उसे वैसा ही रखने का संकल्प हम क्यों नहीं करते हैं? दरअसल यहाँ के लोग सिर्फ़ बातें बनाना जानते हैं पर दी गई सुविधाओं को भोग न कर उसे बरबाद करने में आगे रहते हैं। नई ट्रेन चलाओ तो उसकी सीट फाड़ देंगे। डस्टबिन रखो उसे उखाड़ देंगे। शीशा लगा दो, तोड़ देंगे। टोंटी अच्छी लगी- नोंचकर घर ले जाएँगे। बेसिन में ऐसा माल थूकेंगे कि वो महीनों तक जाम रहेगा। टॉयलेट का लोटा साथ ले जाएँगे। लड़कियों का फ़ोन नम्बर टॉयलेट की दीवारों पर लिख आएँगे और फिर कहेंगे यार! इंडियन रेलवे कभी यूरोप और जापान जैसी नहीं बन सकती। पहले खुद बदलो फिर देश बदलेगा।"[69] भारत के लोग जो कहते है, भारतीय रेल में साफ-सफाई नहीं होती है, रेल मे आधुनिक सुविधाये नहीं है, ऐसे लोगों के लिए माला वर्मा का यह संदेश उचित ही प्रतीत होता है, पहले हमे स्वयं ही अपने संसाधनों का सही से उपयोग करना सीखना होगा, तब जाकर हम यूरोप जापान जैसी स्थिति में आ पाएंगे। प्रस्तुत प्रसंग के माध्यम से यह स्पष्ट होता है कि, केवल सरकारें और नीतियाँ देश को नहीं बदल सकतीं है। जब तक आम जनता खुद की जिम्मेदारी नहीं समझेगी, तब तक कोई भी व्यवस्था सफल नहीं हो सकती। इसलिए हमें सबसे पहले अपनी सोच व्यवहार और आदतों में सुधार लाना होगा, तभी हम एक बेहतर भारत की ओर बढ़ेंगे। बदलाव की शुरुआत दूसरों से नहीं, खुद से होती है। जब नागरिक जिम्मेदार बनेंगे, तभी देश भी विकसित और अनुशासित बनेगा।

जापान मे चाय बनाने के पच्चीस तरीके है। यह स्थानीय लोगों के लिए बहुत महत्व रखता है की, वो अपने मेहमानों को कैसे ओर कितने अदब से चाय पेश करते है। लेखिका के अनुसार- "चाय पिलाने की नफासत से उस घर की कुलीनता का पता चलता है। चाय पिलाना, पीना एक उत्सव का रूप होता है। इसे जैसे-तैसे कोई नहीं बना सकता बल्कि इस रस्म व कला को सिखाने के लिए जापान में कई शिक्षण केन्द्र हैं। मर्द औरतें वहाँ जाते हैं और प्रशिक्षण लेते हैं। यहाँ चाय भी एकाध तरह की नहीं होती है और न बनाने का तरीक़ा एकाध टाइप का होता है बल्कि पच्चीस-तीस तरह की चाय होती है और बनाने का तरीक़ा भी अलग।"[70] इतिहास के स्तर पर देखें तो बारहवीं शताब्दी में ज़ेन बौद्ध भिक्षुओं ने चीन से चाय को जापान में लाकर उसे ध्यान साधना के एक माध्यम के रूप में अपनाया। धीरे-धीरे यह एक सांस्कृतिक प्रतीक बन गई। समुराई योद्धा, बौद्ध भिक्षु और बाद में शाही वर्ग इस परंपरा से जुड़े, जिससे यह कुलीनता और गरिमा का प्रतीक बन गई। इस प्रकार से जापान में चाय केवल स्वाद या ताजगी का विषय नहीं, परंतु वह एक आध्यात्मिक और सांस्कृतिक अनुभव है। चाय पीने और पिलाने की यह परंपरा वहाँ के लोगों के जीवन दर्शन को गहराई से अभिव्यक्त करती है। कई जगह इस चाय की रश्म को 'चानोयु' भी कहते है।

माला वर्मा को खेलों के प्रति रुचि है, तभी उनकी यात्राओं में जगह-जगह पर उन देश के खेलों का वर्णन, वहाँ के मैदान का जिक्र माला जी के लेखन में जगह- जगह देखने को मिलता है। ब्राज़ील यात्रा के दौरान लेखिका फुटबॉल के खिलाड़ी का वर्णन करती है जो विश्व प्रख्यात है- "माराकाना स्टेडियम के प्रवेश द्वार पर 'बेलिनी' को सम्मानित व श्रद्धांजलि देते हुये उनकी आदमकद मूर्ति यहाँ लगाई गई है। बेलिनी को फुटबॉल मैच में वर्ल्ड कप ट्रॉफी को हवा में उठाने की परम्परा शुरू करने का श्रेय दिया जाता है। सन् 1958 में उन्होंने विश्व कप जीतने के बाद इतिहास में पहली बार ट्रॉफी को दाहिने हाथ से ऊपर उठाने का पोज दुनिया के सामने दिया था, जो बाद में फुटबॉल के इतिहास में स्वर्ण अक्षरों में लिखा गया।"[71]

उनकी सोच थी अगर वे ट्रॉफी को एक हाथ से हवा में ऊपर उठाते हैं तो वहाँ मौजूद फोटोग्राफर्स को अपनी तस्वीरों में स्पष्ट रूप से ट्रॉफी को दिखाने का मौका मिलेगा। लोग इसे बेहतर तरीके से देख पाएंगे और दुनियाभर में फोटो प्रकाशित होने के साथ ये इशारा 'जीत' का भी संकेत देता है।

आर्कटिक यात्रा के दौरान लेखिका उत्तर ध्रुव तथा दक्षिण ध्रुव का वर्णन इस प्रकार करती है- "अंटार्कटिका धरती के नीचले छोर पर है और आर्कटिक धरती का सिरमौर है। इतना मान-सम्मान दोनों को दिया गया है फिर भी देखिए इन दोनों में किसी का दिमाग तनिक गर्म नहीं होता- ये हमेशा ठंडे रहते हैं। इतनी ठंड की जल्दी यहां आने की कोई सोच नहीं सकता।"[72] इस प्रसंग के माध्यम से माला वर्मा

अंटार्कटिका और आर्कटिक जैसे ध्रुवीय क्षेत्रों की भौगोलिक विशेषताओं को एक रूपक के रूप में प्रस्तुत करती हैं। लेखिका कहती हैं कि अंटार्कटिका धरती के 'नीचले छोर' पर है, जबकि आर्कटिक 'सिरमौर' है, यानि उत्तर और दक्षिण ध्रुव क्रमशः धरती के शीर्ष और पायदान माने गए हैं। इस तुलना के माध्यम से माला जी इन स्थानों को सम्मानजनक स्थान के रूप में वर्णित करती हैं। परंतु इसी में माला जी एक व्यंग्यात्मक सत्य भी छुपाती हैं कि, चाहे जितना भी गौरव क्यों न दिया गया हो, इन दोनों स्थानों में 'दिमाग तनिक गर्म नहीं होता' यानी यहाँ की जलवायु हमेशा ठंडी रहती है। यहाँ 'दिमाग गर्म नहीं होना' एक प्रतीकात्मक वाक्य है, जो यह दर्शाता है कि ये स्थान शांति, स्थिरता और ठंडक से भरपूर हैं, जहाँ किसी प्रकार का उथल-पुथल या 'गर्मी' नहीं है। यह पंक्ति मानवीय स्वभाव की भी एक तुलना प्रस्तुत करती है, जहाँ 'गर्म दिमाग' गुस्से, अशांति और अस्थिरता का प्रतीक होता है, वहीं ये ध्रुवीय क्षेत्र शांत और स्थिर हैं। लेखिका अप्रत्यक्ष रूप से यह भी कह रही हैं कि, इतनी ठंड और दुर्गमता के कारण इन स्थानों की ओर जल्दी कोई नहीं जाना चाहता। यह प्रकृति की कठोरता की ओर इशारा है जहाँ मनुष्य के रहने लायक परिस्थितियाँ नहीं हैं। इस प्रकार लेखिका भौगोलिक यथार्थ, मानवीय स्वभाव और रूपकात्मक अभिव्यक्ति को मिलाकर एक गहरी बात सरल लेकिन प्रभावशाली ढंग से कहती हैं।

प्रीति सेनगुप्ता जापान यात्रा के दौरान दुनिया के 'टैक्सी ड्राइवर' और जापान के टैक्सी ड्राइवर की तुलना करके उनके वर्तन एवं व्यवहार का चित्रण यहां वर्णित करती है- "मारो तो अेवो ज ख्याल के दुनियाभरनां टैक्सी ड्राइवरो अेक ज शाडामांथी आवता हशे, कारण के कोई पण जग्याअे टैक्सी ड्राइवरोनुं बोलवानुं, चलाववानुं जाने सरखुं ज होय: कर्कश, असभ्य, आंचकावाडुं, पण जपानना टैक्सी ड्राइवरो अेवा नथी। अे लोको बोले शिष्टताथी, अने चलावे सरड़ताथी। टैक्सी लेवी जपानमां मोंघी खरी, पण ड्राइवरोना सभ्य वर्तनमां अेनो बदलो वडी जाय छे। पश्चिमना देशोनी जेम अहीं बक्षिस आपवानी होती नथी।"[73] सामान्यता देखा जाता है की, ये टैक्सी चलाने वाले या ऑटो रिक्शा चलाने वाले व्यक्ति कम पढे-लिखे होते है, सवारी यात्री कोन है, कहां से आया है, कहां जाना चाहता है, इन सब बातों से उन्हें कोई लेना-देना नहीं होता है। इसलिए उनके चाल, चलन मे वो सभ्यता कम देखने को मिलती है, जो किसी पढे-लिखे, समझदार व्यक्ति में देखने को मिलता है। लेकिन प्रीति जी जापान के संदर्भ मे बताती है की, जापान में ऐसा नहीं है। जापान के टैक्सी ड्राइवर एकदम आधुनिक है, वे स्वचछता का महत्व जानते है। सबसे जरूरी बात की वो अपने सवारी यात्री से एकदम सरलता से पेश आते है। यह प्रसंग बताता है की जापान का समाज कितना सहज व मानवीय गुणों से भरपूर है।

प्रीति जी आगे बुलेट ट्रेन की विशेषता का वर्णन इस तरह से करती है- "जपानना यांत्रिककौशल्यना महाविजय जेवी विश्वविख्यात आगगाड़ी छे तीरवेगे के बंदुकनी गोडीना वेगे जती बुलेट-ट्रेन 'शिन्कासेन्न' (shinkansen)। अेने पण दुनियानी अेक अजायबी ज कही शकाय। क्लाकना लगभग अेकसो माइलनी झड़पे अे भागे छे। 1964 मां सौथी पहेली शिन्कान्सेन शरू थयेली। अने अे पछीनां वीस वर्षमां बीजी त्रण दूरवर्ती शिन्कान्सेन लाइन्स बंधाई गई छे। आटली गति छतां आंचका नहीं, अवाज नहीं, धुड़ नहीं, धमाल नहीं।"[74] लेखिका बुलेट ट्रेन को जापानियों के समर्पण का प्रतीक मानती है। जापानी समाज की कार्यशैली, समय के प्रति सम्मान, तथा गुणवत्ता के प्रति निष्ठा इस ट्रेन में प्रत्यक्ष रूप से झलकता है। यह प्रसंग पाठक को तकनीकी जानकारी के साथ प्रेरणा भी देता है कि, किस प्रकार अनुशासन और नवाचार से विश्वस्तरीय उपलब्धियाँ संभव हो सकती हैं।

प्रीति सेनगुप्ता आगे 'रुमानिया' देश का प्रसंग यहां प्रस्तुत करते हुए कहती है- "रुमानिया बीजी जे अेक बाबत माटे जानीतुं थतुं जाय छे ते छे प्रोफेसर-डॉक्टर अेना अस्लान। अेमने प्रचलित करेली जेरोविटाल(Gerovital) नामनी दवाओ, तेम ज तेनाथी अपाती उपचारपद्धतीनां केन्द्रों। अे अेम माने छे के व्यक्ति 120 वर्ष सुधी जीवी शके, पण अे माटे शरीरने अमुक रीते संभाड़वुं जोइअे, खास करीने 40 वर्षनी उंमर थया पछी।"[75] यहां लेखिका ने 'डॉ. अस्लान' का कार्य तथा चिकित्सा के क्षेत्र मे उनकें योगदान का वर्णन किया है। डॉ. अस्लान का मानना है की, उम्र बढ़ने का अर्थ यह नहीं कि जीवन की गुणवत्ता घटे, परंतु सही दिशा में प्रयास करके जीवन को लंबा, स्वस्थ और सार्थक बनाया जा सकता है। यह रुमानिया की चिकित्सा में हुई प्रगति का चमकदार परिचय है।

दक्षिण अमेरिका का 'अमेज़न जंगल' विशाल जैव विविधता का केंद्र है। यह क्षेत्र सैकड़ों आदिवासी जनजातियों का घर भी है, जिनकी जीवनशैली, संस्कृति और परंपराएँ पूरी तरह से प्रकृति पर निर्भर हैं। इन जनजातियों की जीवन-निर्वाह के लिए शिकार एक अत्यंत महत्वपूर्ण कार्य है। शिकार द्वारा भोजन प्राप्त करना, उनके परंपरा का हिस्सा है। प्रीति जी यहां वर्णन करती है, "पृथ्वी परनुं सौथी गोपित स्थान ते अेमेझोनिया। अेनां केटलांये जंगलो नक्शा पर पण नथी। केटलांये झेरी अने जीवलेन जंतुओनी कींवदंतीओ त्यांथी शरू थाय छे। अेना गाढ खुनाओमां रहेती केटलीये आदिजातिओ हजी पंखीओ, वांदरांनो शिकार करे छे, धनुष्यबाणथी माछली पकड़े छे। ने हजी केटलीये जातीओ तो शोधाइ पण नथी के आधुनिक मानसनी आंखे देखाइ पण नथी।"[76] समग्र पृथ्वी रहस्यों से भरी पड़ी है। प्रीति जी ने यहां अेमेझोंनीया की आदि जाती का वर्णन किया है। जिनके बारे मे दुनियां के पास बहुत कम जानकारी है।

समान आदिजाती हमारे भारत के लक्षदीप टापू पर भी है, जिनका दुनिया से संपर्क नहीं है ओर वों आधुनिक भी नहीं होना चाहते। इस प्रसंग द्वारा प्रीति जी संकेत करती हैं कि, अभी भी अमेझोनिया में कुछ ऐसी जातियाँ हैं, जो 'शोधाई पण नथी', अर्थात् जिनका आधुनिक मानव से कोई संपर्क नहीं हुआ है। वे आज भी अज्ञात हैं। वे सभ्यता की दृष्टि से अदृश्य हैं। इससे यह स्पष्ट होता है कि, धरती पर अब भी कुछ हिस्से ऐसे हैं, जो विज्ञान और तकनीक की पकड़ में नहीं आए हैं।

'सिक्किम' यात्रा के दौरान भारतीय सैनिकों के जीवन एवं उनकी ड्यूटी का वर्णन प्रीति सेनगुप्ता यहां प्रस्तुत करती है, "भारतीय सीमा परना सैनीको केटलुं कठिन जीवन जीवे छे ने केटली मुश्केलीओ वेठे छे ते सिक्किममां जोवा मड्युं। साड़ा बार हजार फीटनी ऊंचाई पर छांगुं नामनुं तड़ाव छे। चीननी सरहदथी अे दसेक ज माइल दूर छे ने नकशामां अेनी कोई दिशा बतावाती नथी। आ अत्यंत आरक्षित विस्तार छे। सिक्किम प्रवासखातानी ज मिनीबस प्रवासीओने त्यां लई जाय छे। फोटा पाड़वानी तो शुं पण त्यां केमेरा लई जवानी पण सखत मनाई छे।"[77] एक सैनिक का जीवन त्याग का जीवन होता है, तपस्या का जीवन होता है। यहां दिए गए प्रसंग में सैनिक की ड्यूटी का चित्रण है। प्रीति जी के इस वर्णन से ज्ञात होता है कि, जो भारतीय सैनिक इस सीमांत क्षेत्र में तैनात हैं, उनका जीवन अत्यंत कठिनाइयों से भरा है। भीषण ठंड, ऑक्सीजन की कमी, ऊँचाई पर तैनाती और बाहरी दुनिया से संपर्क का अभाव, यह सब मिलकर सैनिकों के जीवन को अत्यधिक चुनौतीपूर्ण बना देता है। लेकिन इसके बावजूद, वे निरंतर सतर्क रहते हुए देश की सीमाओं की रक्षा कर रहे हैं।

इन सैनिकों को, ड्यूटी के दौरान कितनी समस्याओं का सामना करना पड़ता होगा, यह सोच कर लेखिका अचंभित होती है और आगे कहती है- "वीजड़ी पण त्यां होय अेम लाग्युं नहीं। आटली ऊंचाईनी ठंडीमां, थीजावी देता वरसाद के बरफमां आ 'जवानो' हूंफ कई रीते पामता हशे ?"[78] जिन स्थान पर सैनिक अपनी ड्यूटी निभा रहे है, उस स्थान पर बिजली भी नहीं है, यानी आधुनिक सुख-सुविधाओं का अभाव है। ऐसे में ऊँचाई पर भीषण ठंड, बर्फबारी और तीव्र वर्षा जैसी परिस्थितियों में जवान कैसे गर्मी या आराम पाते होंगे। यह सोचकर ही लेखिका का मन द्रवित हो उठता है। सेना के जवानों का जीवन संघर्ष का प्रतीत है। बिना किसी सुविधा के यह जवान हमारी सीमा की रक्षा करते है। इनके लिए प्रीति सेनगुप्ता के मन में सम्मान का भाव है। सेना के जवानों की स्फूर्ति, स्थानीय लोगों के प्रति सेवा भाव, कर्मनिष्ठा, ड्यूटी के प्रति ईमानदारी को देखकर लेखिका कहती है, "देशनी सीमाओनी रक्षा करवी ते सहेलुं काम नथी। लश्करी वास्तविकता सरहदी प्रांतोमां ज जोवा मड़े ने जोइने थाय के आपणा बहादुर, महेनतु, ध्येयनिष्ठ

‘जवानो’ प्रशंसा अने सन्मानने पात्र छे।”[79] भारतीय सेवा के जवान राष्ट्र के सच्चे रक्षक हैं। वे कठिन मौसम, दुर्गम स्थानों और जीवन की तमाम सुविधाओं के अभाव में भी निष्ठा, साहस और समर्पण से देश की सीमाओं पर ढाल बनकर पहरा देते हैं। उनका अनुशासन, बलिदान और देशभक्ति हम सभी के लिए प्रेरणा है। वे अपने परिवारों से दूर रहकर हमें सुरक्षित जीवन देने में जुटे रहते हैं। उनकी वीरता और धैर्य राष्ट्र की असली शक्ति है। प्रीति सेनगुप्ता के मन में इन सैनिकों के प्रति कृतज्ञता के भाव है। भारतीय जवान हमारे देश का गौरव और अभिमान है।

आलोच्य लेखिकाओं के यात्रा प्रसंग, यात्रा अनुभव रोचकता से परिपूर्ण हैं, क्योंकि वे सूचनात्मक तथ्यों को मानवीय संवेदनाओं में हास्य और अनुभवों की मिठास में पिरोकर प्रस्तुत करती हैं। यही विशेषता उनके साहित्य को सरस, पठनीय और प्रभावशाली बनाती है।

5.9 भारतीयता के तत्व : यात्रा साहित्य में भारतीयता के तत्त्व का अर्थ है, विदेशों में भ्रमण के दौरान वहाँ के अनुभवों से वहाँ के जीवन शैली में भारत जैसा परिद्रश्य नजर आना भारतीयता का तत्व है। भारत भूमि में जन्म होने के कारण आलोच्य लेखिकाओं को अपनी प्रत्येक यात्राओं में भारत याद आता हैं। विदेशों में ऐसे अनेक प्रसंग होते है, जिनमें उन्हे अपने देश की याद आ जाती है। माला वर्मा और प्रीति सेनगुप्ता उस घटना को भारतीयता से भारतीय समाज से जोड़कर उसका चित्रण करती है, भले वों विदेशी भूमि में हो लेकिन उन्हे ऐसा महसूस होता है की, वों भारत में ही है। आलोच्य लेखिकाओं के यात्रा साहित्य में भारतीयता के तत्व अत्यंत गहराई से जुड़े हुए है। प्राप्त भारतीयता के तत्त्व का विवेचन इस प्रकार से है-

माला वर्मा कहीं भी किसी भी देश की यात्रा पर हो उन्हें अपने भारतीय लोगों से मिलना, उनसे बात-चित करना अच्छा लगता है। भारतीय भोजन एवं भारतीय परिधान को माला जी प्रमुखता देती है। विदेशों में भारतीय व्यंजन की तलाश और उससे मन को मिलने वाला सुकून उन्हें प्रसन्नता से भर देता है। ये घटनाक्रम बताता है कि, लेखिका को अपने भारतीयपना से सर्वाधिक लगाव है। मलेशिया यात्रा के दौरान माला वर्मा ने भारतीय तमिल लोग जो वहां रोजगार के उद्देश्य से गए थे, उनका वर्णन बहुत ही बारीकी से प्रस्तुत किया है- “एक अंग्रेज 1897 में पेड़-पौधों की खोज करते-करते वहाँ पहुँचा था। इतनी बड़ी गुफा देखकर वह दंग रह गया। उस अंग्रेज बोटेनिस्ट के बाद ही अन्य स्थानीय लोगों को इस गुफा की जानकारी

मिली। उन दिनों पहाड़ी के आस पास दक्षिण भारतीय हिन्दुओं की आबादी निवास करती थी। सर्वप्रथम वही लोग गुफा की ओर आकर्षित हुए। श्री थंमुस्वामी पिल्लई, श्री कंथप्पा थेवर तथा श्री तिरुनेंगदम पिल्लई आदि लोगों ने मिलकर गुफा में भगवान मुरुगन की प्रतिमा बैठाई जो बाद में एक देव स्थान बन गया। यह घटना 1851 ईस्वीं (अठारह सौ एकावन) की है। उन दिनों भक्तगण बड़ी मुश्किल से झूलती लताओं और पेड़-पौधों के सहारे इस खड़ी ऊँचाई से होते हुए गुफा में पहुँचते थे। धीरे-धीरे यह स्थान प्रसिद्धी पाता गया और एक महत्वपूर्ण तीर्थ स्थान के रूप में स्थापित हो गया। बाद में यहाँ कई चरणों में सीढ़ियों का निर्माण हुआ जिसमें स्थानीय सरकार का भरपूर सहयोग मिला। वहाँ जनवरी में जिस दिन भगवान मुरूगन की पूजा होती है- उत्सव को 'थाई पूसम फेस्टीवल' कहते हैं, जो एक राष्ट्रीय पर्व की तरह मनाया जाता है।"[80] प्रस्तुत विवरण से ज्ञात होता है कि, भारतीय तमिल लोग अपनी संस्कृति को मलेशिया लेकर गए। इसके साक्ष्य यहां इस विवरण में देखने को मिलते हैं।

माला वर्मा जब दूर देश की किसी यात्रा पर होती है, और अचानक से कोई दृश्य ऐसा दिख जाता है, जो उन्हें भारतीय पृष्ठभूमि की याद दिला देता है, तब लेखिका को अपना देश हिंदुस्तान याद आने लगता है। माला जी अमेरिका प्रवास का वर्णन इस तरह करती है- "हम कैलिफोर्निया के गाँव से होकर गुजर रहे थे। गाँव की खूबसूरती देखकर रश्क हो रहा था। विदेशी गाँव देखकर अपने देश के गाँव याद आ जाते हैं। टूटी सड़कें, बिजली नदारद, कच्ची मिट्टी व घास-फूस वाले घर, गरीब किसान, नंग-धड़ंग बच्चे...आदि यही छवि बनती है। बिहार के गाँवों की हालत तो और भी बिगड़ी है। जाने कब कैसे सुधरेगा हमारे भारत का गाँव।"[81] प्रस्तुत प्रसंग से द्वारा माला वर्मा अप्रत्यक्ष रूप से भारतीय ग्रामीण जीवन की बदहाल स्थिति पर चिंता व्यक्त कर रही हैं। माला जी कहती हैं कि, विदेशी गाँवों को देखकर 'रश्क' होता है। यह रश्क केवल सौंदर्य का नहीं, अपितु वहाँ की बुनियादी सुविधाओं, स्वच्छता, सुव्यवस्था और नागरिक जीवन की गरिमा का है। ऐसे गाँवों को देखकर स्वाभाविक रूप से उनके मन में भारत, विशेषकर बिहार के गाँवों की तस्वीर उभर आती है। यह तुलना लेखिका के मन में विराजमान गहरे भारतीयता के भाव और अपनेपन का संकेत देती है। प्रस्तुत प्रकरण में माला वर्मा भारतीय गावों की दशा से खास कर बिहार के गावों की स्थिति से निराश है। माल जी यहाँ भारत के गाँवों की छवि प्रस्तुत करती हैं- टूटी सड़कें, बिजली की अनुपस्थिति, कच्चे मकान, गरीब किसान और नंगे बच्चे, लेखिका न केवल सामाजिक, आर्थिक असमानता की ओर संकेत करती है, अपितु यह भी दर्शाती है कि, भारतीय गाँव आज भी विकास की दौड़ में बहुत पीछे रह गये हैं। लेखिका की यह चिंता केवल आलोचना नहीं है, परंतु एक गहरी

भावनात्मक पीड़ा और आशा से जुड़ी हुई है। माला जी आगे कहती है- 'जाने कब कैसे सुधरेगा हमारे भारत का गाँव' यह वाक्य निराशा के साथ-साथ सुधार की आकांक्षा को भी दर्शाता है।

माला वर्मा यहाँ एक भारतीय नागरिक की भूमिका में हैं, जो विश्व की प्रगति को देखकर अपने राष्ट्र की दशा से तुलना करती हैं और आत्ममंथन करती हैं। उनका उद्देश्य केवल भारत और पश्चिम की तुलना करना नहीं है, परंतु भारतीय नीति-निर्माताओं और समाज को यह सोचने पर विवश करना है कि क्या हम अपने गाँवों को वह गरिमा दे पाए हैं, जिसके वे अधिकारी हैं। माला वर्मा इस प्रसंग के माध्यम से न केवल विदेशी गाँवों की प्रशंसा करती हैं बल्कि, भारतीय ग्रामीण व्यवस्था की कमजोरियों की ओर इशारा करते हुए, पाठकों के मन में बदलाव की चेतना जगाने का प्रयास भी करती हैं।

अपने 'वतन' के लोग एवं भारतीय खान-पान की तलाश माला वर्मा को हमेशा बनी रहती है। यात्राओं के दौरान जब ऐसा नहीं होता है, तब लेखिका का मन अतृप्त हो जाता है। इस बात का जिक्र लेखिका अपने हर प्रवास में करती है। ब्राजील प्रवास के अवसर पर कहती है कि- "ब्राजील में भले भारतीयों की संख्या बहुत ज्यादा नहीं किन्तु भारतीय रेस्तरां जरूर मिल जायेंगे। खासकर तंदूरी रोटी खूब पसंद की जाती है। कुछ भारतीय बंदे जो ब्राजील के कई मुख्य शहरों में बसे हैं और रेस्तरां चलाने का काम करते हैं। मैंने कहीं पढ़ा था एक भारतीय बंदे ने पहली बार कुछ दशकों पूर्व साओ पाउलो में तंदूर की दुकान खोली और वह बहुत मशहूर हुआ। भारतीय व्यंजनों की कदर पूरी दुनिया में होती है। शायद ही दुनिया में कोई ऐसा देश हो जहाँ भारतीय न बसे हो। हाँ, हम भारतीय लोगों का जिगरा बहुत बड़ा होता है।"[82] उपर्युक्त प्रसंग में माला वर्मा ने भारतीय प्रवासियों की वैश्विक उपस्थिति और उनकी सांस्कृतिक छाप को उजागर करने का प्रयास किया हैं। माला जी ने विशेष रूप से ब्राजील जैसे दूरस्थ दक्षिण अमेरिकी देश में भारतीयों की सीमित संख्या के बावजूद, भारतीय संस्कृति और व्यंजनों की लोकप्रियता को रेखांकित किया है। यह प्रसंग मुख्य रूप से न केवल भारतीय व्यंजन 'तंदूरी रोटी' की लोकप्रियता को दर्शाता है, परंतु यह भी बताता है कि, भारतीय जहां भी जाते हैं, वहाँ अपनी सांस्कृतिक जड़ें और खानपान की परंपराएं ले जाते हैं। लेखिका ने 'साओ पाउलो' में एक भारतीय द्वारा तंदूर की दुकान खोलने की ऐतिहासिक घटना का उल्लेख करते हुए यह स्पष्ट किया है कि, भारतीय उद्यमिता और श्रमशीलता किस तरह से किसी भी देश में सम्मान प्राप्त कर सकती है। भले ही भारतीयों की संख्या बहुत अधिक न हो, परंतु उनका योगदान स्थानीय संस्कृति और समाज में निश्चित रूप से प्रभावशाली होता रहा है। भारतीयों की पहचान उनके काम, व्यवहार और समर्पण भाव से होती है। 'हम भारतीय लोगों का जिगरा बहुत बड़ा होता है' इस वाक्य के माध्यम से

माला वर्मा भारतीयों के आत्मबल, साहस और संघर्षशीलता को उजागर करती हैं। चाहे दुनिया का कोई भी कोना हो, भारतीय वहां अपनी मेहनत, आत्मीयता और परंपराओं के माध्यम से एक पहचान बना लेते हैं।

इस प्रकार, यह प्रसंग केवल ब्राजील में बसे भारतीयों की उपस्थिति का चित्रण भर नहीं है परंतु यह वैश्विक परिप्रेक्ष्य में भारतीय संस्कृति की स्वीकार्यता, भारतीयों की दृढ़ इच्छाशक्ति और भारतीयों का आत्मविश्वास को भी उजागर करता है। माला वर्मा यह बताना चाहती हैं कि, भारतीयता की गूंज सीमाओं से परे जाकर भी लोगों के हृदय में स्थान बना रही है।

प्रीति सेनगुप्ता 'इजिप्त' यात्रा के दौरान स्थानीय लोगों को देखती है, तब उनके मन में भारत की तस्वीर उमट जाती है, घटना का वर्णन लेखिका इस तरह करती है- "ताहरिर-स्वातंत्र्य-मैदान कॅरोंनु एक मुख्य स्थढ छे। त्या मोटो बस डिपो छे। त्याथी ज बे-त्रण मुख्य रस्ता शहेरनी अंदर तरफ़ फँटाय छे। मोटरो उभी रहेती जनाती पण नथी, ने लोको बहादुरीपूर्वक रस्तो ओढंगी जाय छे। भीड़वाड़ी बसोमां लोको दौड़ीने चढ़ी जाय छे। घोंघाट के धूढ़ के गरमी के पीड़ा भुखरा एकविघरंगी बाह्य जीवननी परवा कर्या वगर लोको ऐमना लाम्बा, आकर्षक, आछा रंगना झब्बा-जलापा-मा आनंदथी आमतेम फर्या करें छे। भारत याद आवी जाय खरू। श्याम लोकों, रस्ता, मकानों, दुकानों बधु ज धूढियु, स्त्रिओना पोशाक शिवाय रंगोनो अभाव, क्याक वृक्षों खरा, पण ते पण धूढियां। जाने बधे ज रणनों स्पर्श लागी गयों हतो। रस्ता परना जाहेरातोनां मोटा मोटा पटियांमां केटलाक हिंदी सिनेमानां पोस्टर पन हता।"[83] मनुष्य को अपने देश से अपनी भूमि से बहुत लगाव होता है, और ऐसा तब अधिक देखने को मिलता है, जब वह एक जगह को छोड़कर दूसरी जगह पर जाता है। व्यक्ति उस स्थान के परिवेश को, घटनाओं को, वहां की विशेषताओं को दूसरे स्थान पर खोजता है। इसलिए उसे दूसरा स्थान भी पहले जैसा लगने लगता है। प्रीति जी कहती है, ताहरिर स्वतंत्रता मैदान काहिरा का एक प्रमुख स्थल है। वहाँ एक बड़ा बस डेपो मौजूद है। वहीं से दो-तीन मुख्य सड़कें शहर के भीतर जाती हैं। ताहरिर मैदान की हलचल मन को हक्का-बक्का कर देती है। गाड़ियाँ कहीं ठहरी हुई नहीं लगती, और लोग साहसपूर्वक सड़क पार करते हैं। भीड़ से भरी बसों में लोग दौड़कर चढ़ जाते हैं। शोर-शराबा, धूल, गर्मी या पीले-भूरे एकरस बाहरी जीवन की परवाह किए बिना लोग अपने लंबे, आकर्षक और हल्के रंगों वाले कपड़ों (झब्बा-जलापा) में खुशी से चलते नजर आते हैं। ऐसे परिवेश में प्रीति सेनगुप्ता को अपने देश भारत की याद आ ही जाती है। चारों ओर धूल-धक्कड़, सड़कें, मकान, दुकानें, सब कुछ धूल से अटपटा नजर आता है। महिलाओं के परिधानों को छोड़कर रंगों

का अभाव, कहीं-कहीं पेड़-पौधे जरूर हैं, लेकिन वे भी धूल से भरे हुए है। ऐसा लगता है मानो हर जगह रेगिस्तान की छाया पड़ रही हो। सब कुछ ऊँट के पीलेपन जैसे रंग में रंगा हुआ दिखाई देता है। भला भारत की याद क्यों न आए? सड़कों के किनारे लगे बड़े-बड़े विज्ञापन बोर्डों पर कुछ हिंदी फिल्मों के पोस्टर भी दिख जाते हैं। दुनिया भर मे भारतीय फिल्म और सिनेमा के सितारे लोगों के दिल मे अपना स्थान बनाए हुए है। इस तरह के अनुभवों से प्रीति जी को ये समग्र परिद्रश्य भारतीय ही लगने लगता है।

प्रीति सेनगुप्ता 'टोक्यो' के प्रसिद्ध 'लननी-कापनी' लोकोत्सव का अवलोकन करने जाती है। तब प्रीति जी 'जापानी लननी-कापनी' तथा गुजराती गरबा की तुलना इस तरह करती है, "टोकियोमां अेक लोकोत्सवमां पण जई चड़ेली। आपणा गरबाथी जेम अहीं पण स्त्री-पुरुषो गोडाकारे ढोलना ताले, लणणी-कापणीनां गीतो गातां गातां फरता हतां। खुल्ला जाहेर चोगानमां, सामाजिक संयमने छेटो मुकीने, मन खोली लेवानी आ सरस तक हती बधांने माटे। बराबर वच्चे ऊंचा मंच पर मोटो ढोल हतो। जापानीझ आकारना ढोल-नगारांने 'ताईको' कहे छे। आरोग्यवान युवको प्रबड़ शक्ति अने उत्साह साथे अेमने वगाड़े छे। अेना नादमां, अेना तालमां अजब खेंचाण होय छे।"[84] लेखिका ने जापानी लोकोत्सव की तुलना भारतीय गरबा उत्सव से की है। जैसे गुजरात में नवरात्रि के दौरान स्त्री-पुरुष ताल पर नृत्य करते है और गीत गाते हैं, वैसे ही जापान में भी पुरुष और महिलाएं गोल घेरा बनाकर उसमें ढोल-ताल पर गाते-बजाते और थिरकते हैं। उत्सव मनाने का जो स्वरूप प्रीति सेनगुप्ता को गुजरात के गरबों में दिखता है, वहीं रूप उन्हें जापान के लननी-कापनी में भी एक समान प्रतीत होता है। प्रस्तुत प्रसंग से स्पष्ट होता है कि, सांस्कृतिक सीमाएं भले ही भौगोलिक रूप से अलग हों लेकिन मानव भावनाएं और उत्सव मनाने की प्रवृत्ति एक जैसी होती है।

पृथ्वी के भिन्न-भिन्न हिस्सों में रहने वाले मानव समुदायों के बीच सांस्कृतिक समानताएं कितनी गहराई से जुड़ी होती हैं, इसका वर्णन प्रीति सेनगुप्ता ताइवान के इस प्रसंग से करती है, "ताइवानना आदिवासी-नृत्यों थता, बधी ज नृत्यांगनाओ तन्वी अने देखावड़ी हती, वेशभूषा रंगरंगींन अने आकर्षक हती, नृत्य अने संगीत संमोहक हता। अेना सुरों आपणा देशना उत्तरना प्रदेशोंना आदिवासीओनी कला संस्कृतिनी याद आपी गया। केटकेटला दुरना प्रदेशों वच्छे केवु स्पष्ट साम्य। मनुष्यना इतिहासमा केटला वणउकल्या हशे।"[85] प्रीति सेनगुप्ता प्रस्तुत अनुभव के माध्यम से ताईवान के आदिवासी नृत्यों की तुलना उत्तर भारत के आदिवासी समाजों की कला-संस्कृति से करती हैं। उनकें सुर और नृत्य शैली में प्रीति जी को अपने देश की लोक-संस्कृति की झलक मिलती है। यह तुलना यह दर्शाती है कि भले ही भाषा, भूगोल और

इतिहास अलग हों, पर मानव-अभिव्यक्ति की मूल प्रवृत्तियाँ और सांस्कृतिक प्रतीक अक्सर एक बराबर होते हैं। प्रीति सेनगुप्ता इस अनुभव से एक गहरी दार्शनिक सोच पाठकों के सामने लाती है, 'मनुष्यना इतिहासमा केटला वणउकल्या हशे।' अर्थात इतिहास में इंसान ने कितनी यात्राएँ की होंगी, कितने प्रदेशों तक पहुँचा होगा, जिसके परिणामस्वरूप संसार के दो भिन्न क्षेत्रों की संस्कृतियों में इतनी समानता पाई जाती है। दुनिया के विभिन्न कोनों की संस्कृतियों में छिपी समानताएँ इस बात का प्रमाण हैं कि हम सब मूलतः एक वैश्विक परिवार से हैं। यह विचार मानव सभ्यता की एकता और विकास के क्रम को अभिव्यत करता है।

प्रीति सेनगुप्ता भारत एवं अमेरिका की तुलना इस तरह से करती है- "आ जीवतुं, खिलतुं, विकसतुं, दिने दिने जन्मतुं, कल्चर छे। अेक बाजु, आ देश बसो वर्ष ज जूनो होई अेनामां युवानीनो तरवराट छे, तो बीजी बाजु, 'इंडियन' अने 'ब्लैक' प्रजाने कारणे अेनी पासे लोकप्रथाओने किंमती वारसे छे। अेक देश छतां अेमां अमाप वैविध्य छे। आटली भिन्नता छतां अेमां कशुं अेकसूत्रीय छे।"[86] एक तरफ अमेरिका जो आधुनिकता और व्यक्तिगत स्वतंत्रता का प्रतीक है, वहीं भारत परंपरा, विविधता और सांस्कृतिक एकता का प्रतीक है। प्रीति जी कहती है कि, अमेरिका एक देश होकर भी उसमें 'अमाप वैविध्य' है और फिर भी 'कशु अेकसूत्रीय' अर्थात् एकता है। यह कथन भारत पर भी उतना ही लागू होता है। भारत में भी हजारों वर्षों से अनेक धर्म, संप्रदाय, जातियां, भाषाएं और संस्कृतियां एक साथ जीवित हैं, और यह सब एक राष्ट्रीय चेतना से बंधे हैं। इस प्रसंग के माध्यम से प्रीति सेनगुप्ता यह बताना चाहती हैं कि, भारत और अमेरिका दो भिन्न संस्कृतियाँ हैं, पर दोनों में कुछ ऐसी विशेषताएँ हैं जो उन्हें खास बनाती हैं। अमेरिका के संदर्भ में 'गीता सिंह' कहती है, "जनसंख्या में इतनी विविधता है कि लगे कि संसार का हर समुदाय यहाँ प्रतिनिधित्व पा गया हो। काले, गोरे, ब्राउन, मेक्सिकन, कोरियन सभी दिखते हैं, यानी कि विश्व-बंधुत्व की सही तस्वीर यहीं पर दिख रही थी।"[87] अमेरिका जहाँ आधुनिकता, नवाचार और स्वतंत्रता का उदाहरण है, वहीं भारत अपनी सांस्कृतिक विरासत, आध्यात्मिकता और विविधता में एकता का परिचायक है। दोनों देशों में विविधता में एकता के दर्शन होते है।

'फ्रांस' यात्रा के दौरान प्रीति सेनगुप्ता को वहां के गली-मोहल्लों को देखकर अहमदाबाद की याद आती है, उसका वर्णन प्रीति जी इस तरह करती है- "डाबा किनारा परना लेटिन क्वार्टरनी वांकीचूकी, नानी गलीओ मने अमदावादनी पोडोनी याद अपावती रही। घणी वार जुदी ज जग्याओमां पण साम्य देखाई जाय छे। अजाणी जग्याअे पण क्यारे आरामने भाव थई जाय छे।"[88] प्रीति सेनगुप्ता कहती हैं कि, 'डाबा

किनारा परना लेटिन क्वार्टरनी वांकीचूकी, नानी गलीओ मने अमदावादनी पोडोनी याद अपावती रही।' इस वाक्य में लेखिका फ्रांस के पेरिस स्थित 'लेटिन क्वार्टर' की गलियों को देखकर अपने जन्मस्थान अहमदाबाद की गलियों को याद करती हैं। यह केवल एक भौगोलिक तुलना नहीं है, परंतु स्मृति, अपनत्व की भावना का भी संकेत है। लेटिन क्वार्टर की तिरछी-टेढ़ी, संकरी गलियाँ उन्हें अहमदाबाद की क्रमबद्ध पुरानी गलियों की याद दिलाती हैं। इस वाक्य से ज्ञात होता है कि, यात्रा के दौरान विभिन्न स्थानों की भौतिक बनावट, गली-मोहल्लों की रचना एवं वहां की जीवनशैली और वातावरण हमें हमारे अतीत और जड़ों से जोड़ते है।

प्रीति जी जब फ्रांस की गलियों से गुजरती हैं, तो उन्हें लगता है कि वे कोई अनजानी जगह नहीं, बल्कि अपनी जानी-पहचानी दुनिया का ही कोई विस्तार देख रही हैं। यही कारण है कि वे लिखती हैं: 'अजाणी जग्याओ पण क्यारे आरामने भाव थई जाय छे।' अर्थात कोई अपरिचित जगह भी कभी-कभी अपनापन देने लगती है। यह भाव दर्शाता है कि मनुष्य की स्मृतियाँ और भावनाएँ समय-स्थान की सीमाओं को पार कर जाती हैं। यात्राएं केवल दृश्य स्थलों की खोज नहीं होतीं, परंतु ये आत्मिक अनुभवों की पुनः खोज होती हैं। लेखक या यात्री का मन जाने-अनजाने अपने अतीत और स्मृतियों से वर्तमान की तुलना करता है, और नये स्थलों में पुराने परिचित बिंब ढूँढ लेता है। यही कारण है की प्रीती सेनगुप्ता की स्मृति में अहमदाबाद की "पोल" (पुरानी बस्तियाँ) इस कदर रची-बसी हैं कि, एक विदेशी शहर की गलियाँ भी उन्हें अपनी ज़मीन जैसी प्रतीत होती है। एक गुजराती लेखिका फ्रांस की गलियों में भी अपनापन महसूस कर सकती है, जो यह सिद्ध करता है कि मानवीय अनुभवों की सार्वभौमिकता किसी भी भाषा, देश या संस्कृति से परे जाकर हमें जोड़ने का कार्य करती है।

इस प्रकार से माला वर्मा और प्रीति सेनगुप्ता के यात्रा साहित्य में भारतीयता के तत्त्व प्रमुखता से विद्यमान है। आलोच्य लेखिकाओं को अपने भारतीयता पर गर्व व गौरव है। वे जहां कहीं जाती है अपने साथ भारतीयता की पहचान तिरंगा जरूर रखती है। माला वर्मा तो भारतीय परिधान में ही अपनी यात्राएं करती है। प्रीति सेनगुप्ता के साथ यह थोड़ा कम देखनें को मिलता है। लेकिन दोनों के यात्रा साहित्य में भारत का गौरव विराजमान है। इस तरह यात्रा के तत्वों के आधार पर यह कहां जा सकता है कि माला वर्मा और प्रीति सेनगुप्ता की यात्राओं में यात्रा के सभी महत्वपूर्ण तथ्य गहराई के साथ मौजूद है।

इससे यह स्पष्ट होता है कि माला वर्मा और प्रीति सेनगुप्ता की यात्राएं केवल घूमने-फिरने की, मनोरंजन प्रदान यात्राएं नहीं है, इससे परे आलोच्य लेखिकाओं की यात्रा में दुनिया का इतिहास है, इनकी यात्राओं

में भोगोलिक स्थलों की विविधता है, विश्व का समाज है, प्रकृति की घटा है, मानवीय मूल्य है, संस्कार है, प्रेम है, करुणा है, आधुनिकता है, ऐसे अनगिनत तत्व आलोच्य लेखिकाओं के यात्रा साहित्य में मौजूद है। एक सतर्क एवं सजग यात्री की भांति माला वर्मा और प्रीति सेनगुप्ता ने संसार के अनेक स्थानों को देखा, समझा और उसे अपने यात्रावृत्तांत में प्रस्तुत किया है। इनको देख कर यह प्रामाणिक हो जाता है कि इनकी यात्राएं तथ्य व तर्क आधारित ज्ञान, संवेदनशीलता से पूर्ण परिपक्व यात्रियों की यात्राएं है। आने वाली पीढ़ी के लिए इनका कार्य वास्तव में एक प्रेरणा है।

संदर्भ सूची :

1. माला वर्मा, यूरोप यात्रा संस्मरण, पृष्ठ सं. 07
2. वही, पृष्ठ सं. 07
3. नासिरा शर्मा, जहां फव्वारे लहू रोते हैं, पृष्ठ सं. 310
4. माला वर्मा, जापान यात्रा-वृत्तांत, पृष्ठ सं. 31
5. वही, पृष्ठ सं. 31
6. वही, पृष्ठ सं. 221
7. माला वर्मा, साउथ अमेरिका, पृष्ठ सं.47
8. वही, पृष्ठ सं. 52
9. प्रीति सेनगुप्ता, पूर्वा, पृष्ठ सं. 55
10. वही, पृष्ठ सं. 88
11. वही, पृष्ठ सं. 103
12. इन्दु जैन, पत्तों की तरह चुप, पृष्ठ सं. 40
13. प्रीति सेनगुप्ता, दिक् दिगत, पृष्ठ सं. 13
14. वही, पृष्ठ सं. 108
15. प्रीति सेनगुप्ता, अपराजिता- सात खंड परना निबंधोनो संचय, पृष्ठ सं. 23
16. वही, पृष्ठ सं. 23
17. माला वर्मा, जापान यात्रा-वृत्तांत, पृष्ठ सं. 67
18. माला वर्मा, साउथ अमेरिका, पृष्ठ सं. 58
19. प्रीति सेनगुप्ता, पूर्वा, पृष्ठ सं. 85
20. वही, पृष्ठ सं. 126
21. माला वर्मा, आईये मलेशिया सिंगापुर थाईलैंड चलें, पृष्ठ सं. 32-33
22. माला वर्मा, अमेरिका में कुछ दिन, पृष्ठ सं. 46
23. माला वर्मा, साउथ अमेरिका, पृष्ठ सं. 28
24. वही, पृष्ठ सं. 34
25. प्रीति सेनगुप्ता, पूर्वा, पृष्ठ सं. 77

26.वही, पृष्ठ सं. 140
27.प्रीति सेनगुप्ता, अेक पंखीनां पींछां सात, पृष्ठ सं. 53
28.माला वर्मा, जापान यात्रा-वृत्तांत, पृष्ठ सं. 114
29.प्रीति सेनगुप्ता, पूर्वा, पृष्ठ सं. 57
30.वही, पृष्ठ सं. 101
31.वही, पृष्ठ सं. 132
32.वही, पृष्ठ सं. 244
33.प्रीति सेनगुप्ता, दिक् दिगत, पृष्ठ सं. 123
34. वही, पृष्ठ सं. 139
35. डॉ.अवधेश कुमार, मधुमती-फरवरी 2025, पृष्ठ सं.30
36.माला वर्मा, अमेरिका में कुछ दिन, पृष्ठ सं. 73
37.माला वर्मा, जापान यात्रा-वृत्तांत, पृष्ठ सं.163
38.प्रीति सेनगुप्ता, पूर्वा, पृष्ठ सं. 98
39.गोविंद मिश्र, धुंध-भरी सुर्खी, पृष्ठ सं. 04
40.प्रीति सेनगुप्ता, पूर्वा, पृष्ठ सं. 107
41.वही, पृष्ठ सं. 118
42.वही, पृष्ठ सं. 131
43.वही, पृष्ठ सं. 190
44.प्रीति सेनगुप्ता, दिक् दिगत, पृष्ठ सं. 23
45.वही, पृष्ठ सं. 55
46.वही, पृष्ठ सं. 84
47.वही, पृष्ठ सं. 109
48.माला वर्मा, यूरोप यात्रा संस्मरण, पृष्ठ सं. 172
49.माला वर्मा, अमेरिका में कुछ दिन, पृष्ठ सं. 101
50.माला वर्मा, जापान यात्रा-वृत्तांत, पृष्ठ सं. 202
51.वही, पृष्ठ सं. 202-203
52.माला वर्मा, कंबोडिया वियतनाम, पृष्ठ सं. 204

53.प्रीति सेनगुप्ता, पूर्वा, पृष्ठ सं. 83

54.वही, पृष्ठ सं. 115

55. निर्मल वर्मा, चिड़ों पर चाँदनी, पृष्ठ सं. 20

56. निर्मल वर्मा, शताब्दी के ढलते वर्षों में, पृष्ठ सं. 167

57.माला वर्मा, चीन देश की यात्रा, पृष्ठ सं. 264

58.प्रीति सेनगुप्ता, पूर्वा, पृष्ठ सं. 131

59.प्रीति सेनगुप्ता, सूरज संगे दक्षिण पंथे, पृष्ठ सं. 132

60.वही, पृष्ठ सं. 249

61.वही, पृष्ठ सं. 250

62.प्रीति सेनगुप्ता, मन तो चंपानु फूल, पृष्ठ सं. 09

63.वही, पृष्ठ सं. 11

64.प्रीति सेनगुप्ता, अपराजिता- सात खंड परना निबंधोनो संचय, पृष्ठ सं. 276

65.माला वर्मा, पिरामिडों के देश में, पृष्ठ सं. 35

66.माला वर्मा, जापान यात्रा-वृत्तांत, पृष्ठ सं. 88

67.वही, पृष्ठ सं. 89

68.वही, पृष्ठ सं. 98

69.वही, पृष्ठ सं. 99

70.वही, पृष्ठ सं. 236

71.माला वर्मा, साउथ अमेरिका, पृष्ठ सं. 49

72.माला वर्मा, आर्कटिक ध्रुवीय भालू का देश, पृष्ठ सं. 127

73.प्रीति सेनगुप्ता, पूर्वा, पृष्ठ सं. 92

74.वही, पृष्ठ सं. 119

75.वही, पृष्ठ सं. 230

76.प्रीति सेनगुप्ता, सूरज संगे दक्षिण पंथे, पृष्ठ सं. 31

77.प्रीति सेनगुप्ता, अपराजिता- सात खंड परना निबंधोनो संचय, पृष्ठ सं. 20

78.वही, पृष्ठ सं. 21

79.वही, पृष्ठ सं. 21

80.माला वर्मा, आईये मलेशिया सिंगापुर थाईलैंड चलें, पृष्ठ सं. 34
81.माला वर्मा, अमेरिका में कुछ दिन, पृष्ठ सं. 197
82.माला वर्मा, साउथ अमेरिका, पृष्ठ सं. 74
83.प्रीति सेनगुप्ता, पूर्वा, पृष्ठ सं. 25-26
84.वही, पृष्ठ सं. 137
85.वही, पृष्ठ सं. 169
86.प्रीति सेनगुप्ता, दिक् दिगत, पृष्ठ सं. 15
87.गीता सिंह, गद्य मंजूषा साहित्य अमृत पत्रिका, पृष्ठ सं.201
88.प्रीति सेनगुप्ता, दिक् दिगत, पृष्ठ सं. 59